Chap- 5

पंचम अध्याय

साठोत्तरी हिन्दी कहानियों में राष्ट्रीय चेतना

साहित्य की विभिन्न विधाओं में आज सर्वाधिक लोकप्रिय विधा कहानी है। प्राचीनकाल में कहानी, लघुकथा, गल्प और आख्यायिका के नाम से अभिहित थी, किन्तु हिन्दी कहानी का जो स्वरूप आज प्रचलित है वह आधुनिक युग की देन है।

रचना काल की दृष्टि से भारतीय कथा साहित्य अत्यन्त प्राचीन है। उसका विस्तार वैदिक संस्कृत, संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं में मिलता है। कहानी का पुराना रूप आख्यायिकाओं,आख्यानओं,जातक कथाओं,पौराणिक कथाओं, दन्त कथाओं,लोक-कथाओं आदि के रूपों में मिलता है।

कहानी की परिभाषा अनेक प्रकार से दी गई है। पाश्चात्य साहित्य जगत के एडगर एलन पो-ने "कहानी को रसोद्रेक करने वाला एक ऐसा आख्यान माना है जो एक ही बैठक में पढ़ा जा सके।"[1] एच.जी.वेल्स ने- भी पो से ही मिलती-जुलती बात कही है।उनका कहना है कि-"कहानी तो बस वही है जो लगभग बीस मिनट में साहस और कल्पना के साथ पढ़ी जाय।"[2] कहानी के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कथा सम्राट मुंशी प्रेमचन्द जी ने कहा है "कहानी एक रचना है, जिसमें जीवन के एक अंग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है। उपन्यास की भाँति उसमें मानव-जीवन का सम्पूर्ण तथा बृहद रूप दिखाने का प्रयास नहीं किया जाता। न उसमें उपन्यास की भाँति सभी रसों का सम्मिश्रण ही होता है। वह एक रमणीय उद्यान नहीं जिसमें भाँति-भाँति के फूल-बेल-बूटे सजे हुए हैं,बल्कि एक ऐसा गमला है जिसमे एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में दृष्टिगोचर होता है।"[3]

हिन्दी में कहानियों के आरम्भ के सम्बन्ध में आलोचकों में मतभेद हैं। कतिपय विद्वानों ने कहानी का आरंभ गोकुलनाथ द्वारा रचित 'चौरासी वैष्णवों की वार्ता' तथा 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता' से माना है किन्तु आधुनिक हिन्दी कहानी के जिन मानदण्डों को मान्य किया गया है उन पर ये कहानियाँ खरी नहीं उतरती। जटमल की ' गोरा - बादल की कथा ', सदल मिश्र की ' नासिकेतोपाख्यान ', मुंशी सदासुखलाल की ' सुखसागर ' की रचना की, किन्तु इन सभी कथाओं में मौलिकता का अभाव है। इंशा अल्लाह खाँ की ' रानी केतकी की कहानी ' को हिन्दी की सर्व प्रथम मौलिक कहानी माना गया, किन्तु आधुनिक कहानी के तत्व इसमें भी उपलब्ध नहीं होते।[4] ' सरस्वती ' पत्रिका में सन् १९०० ई. में प्रकाशित हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी 'इन्दुमती'हैं ज़िसे पं० किशोरीलाल गोस्वामी ने लिखा था।

सन् १९०० ई०से लेकर आजतक के हिन्दी कहानी के इतिहास को मुख्य रूप से दो भागों में बाँट सकते है- स्वतन्त्रता पूर्व हिन्दी कहानियाँ और स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानियाँ। स्वतन्त्रता पूर्व हिन्दी कहानियों को भी अध्ययन की सुविधा के लिए तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है - प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी कहानी, प्रेमचन्दयुगीन हिन्दी कहानी और प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी कहानी।

हिन्दी में कहानी का वास्तविक आगमन भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र से होता है। भारतेन्दु युग में सर्वप्रथम भारतेन्दु जी ने 'एक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' नामक कहानी की रचना की, परन्तु कहानी कला की दृष्टी से इसे उच्च कोटी की नहीं माना गया तथापि इसमें कहानी जैसी रोचकता मिलती है। द्विवेदी युग में 'सरस्वती ' पत्रिका के सम्पादन से आधुनिक ढ़ंग की कहानियों को जन्म मिला। इसमें सर्वप्रथम किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' कहानी प्रकाशित हुई।

हिन्दी कहानियों के विकास के इतिहास में प्रेमचन्द जी का आविर्भाव एक महत्त्वपूर्ण घटना है। प्रेमचन्द जी के आगमन से हिन्दी कहानी के क्षेत्र में एक नया उत्थान आरम्भ हुआ। अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि के कहानीकार जयशंकर प्रसाद भी इसी युग में आते हैं। हिन्दी में प्रेमचन्द जी की पहली कहानी सन् १९१४ ई. में 'पंच परमेश्वर' प्रकाशित हुई। इससे पूर्व वे धनपतराय के नाम से उर्दू में लिखा करते थे। प्रेमचन्द की कहानियों के द्वारा पहली बार भारतीय जीवन का यथार्थ स्वरूप कहानियों में प्रतिपादित हुआ। प्रेमचन्दजी की कहानियों में भारतीय कृषक वर्ग का विशद् जीवन चित्र भी उपस्थित हुआ।'प्रेमचन्द ने समाज की स्थितियों का यथार्थ बहिर्मुखी चित्रण ही अधिक किया है। इसके विपरीत जयशंकर प्रसाद की कहानियों में समाज की स्थितियों का अन्तुर्मुखी चित्रण मिलता है।' [5] प्रेमचन्द युग के अन्य सफल, सशक्त कहानीकार है श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी। इनकी सर्वप्रथम कहानी 'उसने कहा था' सन् १९१५ में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई। हिन्दी साहित्य में युद्ध की पृष्टभूमि पर लिखी गई यह सर्वप्रथम कहानी है। प्रेमचन्द युग में विश्वम्भरनाथ शर्मा, सुदर्शन और उपेन्द्रनाथ अश्क के नाम उल्लेखनीय है।

प्रेमचन्द जी के बाद हिन्दी कहानी साहित्य के क्षेत्र में अनेक नव्य प्रवर्तन देखने को मिलते हैं। पाश्चात्य साहित्य से अधिक सम्पर्क और विश्व में होने वाले शीघ्र परिवर्तनों एवं चेतना के नवोदय ने हिन्दी कहानी को भी यथेष्ट प्रभावित किया। इस युग में मनोवैज्ञानिक एवं दार्शनिक कहानियों का प्रवर्तन हुआ। इसका प्रथम परिचय हमे जैनेन्द्र की कहानियों में मिलता है। प्रेमचन्दोत्तर युग में मनोवैज्ञानिक धारा के साथ - साथ मार्क्सवादी विचारधारा के भी दर्शन होते है। यशपाल इस धारा के सफल कहानीकार है। इन्होने रूढ़ियों, शोषणो के विरूद्ध सबल स्वर मुखर किया है। इन्हें विशुद्ध समाजवादी कहानीकार माना

जाता है। उपेन्द्रनाथ अश्क, चन्द्रगुप्त विधालंकार, अज्ञेय, सुदर्शन, भगवतीचरण वर्मा,महादेवी वर्मा, रांगेय राधव आदि कहानीकारों ने एक नया मोड़ देकर कहानी को मनोवैज्ञानिक धरातल पर विकसित किया।

स्वातन्त्र्योत्तर काल,हिन्दी कहानी साहित्य की दृष्टि से पर्याप्त महत्त्वपूर्ण काल है। स्वतन्त्रता प्राप्त करने के बाद भारतीय नागरिक के मन में नये भारत की कल्पना थी। ऐसे भारत की जिसके सम्बन्ध में उसने स्वतन्त्रता से पूर्व स्वप्न संजोये थे। नये भारत के परिवर्तित हो रहे रूप का काफी सजग और कलात्मक चित्र हमें स्वातन्त्र्योत्तर कहानी लेखन में देखने को मिलता है। " सन् ६० के बाद के कहानीकार ने समाज के जीवन और मूल्य को कहीं आरोपित नहीं किया, उसने तो उसके अन्दर से निकलते हुए सत्य को व्यक्त किया है।"[6] डॉ० नागेश्वर सिंह के अनुसार- "साठोत्तरी कहानी में हीरो गौण हो गया है। उनमें विचार या आइडिया के स्थान पर भोगा हुआ सामाजिक यथार्थ ही अधिक व्यक्त हुआ है। साथ ही भोगे हुए यथार्थ की प्रामाणिकता पर भी बल दिया गया है।"[7]

"हिन्दी कथा साहित्य में ६० के बाद से एक नयी पीढ़ी आ गयी। १९५० से पहले की पीढ़ी (जैनेन्द्र आदि) यथार्थ के सृजन पर बल देती थी, ५० के बाद की पीढ़ी में यथार्थ की अभिव्यक्ति को प्रमुखता मिलीं। सन् ६० के बाद की पीढ़ी यथार्थ की खोज में लगी हुई है।"[8] डॉ० विजय द्विवेदी के मतानुसार- "साठोत्तरी कहानी मनुष्य के भीतर दबे हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म धरातलों को संघर्ष के स्वर पर अभिव्यक्ति देती है। नियति और भाग्यवादी स्थिति अब नहीं रही। स्थिति से समझौता नहीं जूझने की प्रक्रिया जारी है। साथ ही सम्बन्धों का विघटन भी तेजी से होता जा रहा है। राजनेताओं के सारे आश्वासन खोखले और झूठे साबित हो रहे हैं। जिस पुलिस पर रक्षा का भार है वही भक्षक बन रही है। इन सारी विसंगतियों का चित्रण साठोत्तरी कहानी में हुआ है।"[9]

नारी- जीवन में भी परिवर्तन दिखाई दिया है। नारी अब अर्जनशीला है। आर्थिक मामले में वह आत्म निर्भर होती जा रही है। जो नारी कमा रही है वह पुरूष से दब कर नहीं रहना चाहती। उसमें स्वाभिमान की भावना कूट - कूट कर भर जाती है। स्वाभीमानी नारी का जैसा चित्रण साठोत्तरी हिन्दी कहानीकारों ने किया है वैसा शायद ही कभी पहले हुआ होगा।

इस प्रकार आधुनिक कहानी में नव्य कथ्य, नव्य विचार एवं नव्य शैली का स्वरूप पाया जाता है।

साठोत्तरी हिन्दी कहानियों का अध्ययन करते हुए राष्ट्रीय -चेतना के जिन विविध रूपों का आकलन पाया जाता है,वे इस प्रकार हैं ---

१) राजनीतिक चेतना का स्वरूप :--

सदियों की पराधीनता के उपरान्त १५ अगस्त १९४७ ई. को देश ने राजनैतिक स्वाधीनता प्राप्त की। २६जनवरी १९५० ई० देश को गणतंत्र राष्ट्र घोषित कर सभी भारतीयों को समानाधिकार प्रदान किये गए। शासकी व्यवस्था को सुचारू और संगठित रूप से चलाने के लिए जनतांत्रिक पध्दति को अपनाकर मत्रिमंड़ल का गंठन किया गया । भारतीय नेताओं और चिन्तकों ने स्वतन्त्रता आन्दोलन के माध्यम से देश की जनता को खुशहाल करने का सपना संजोया था। जनता को यह विश्वास दिलाया था कि लोकतंत्रात्मक प्रणाली के माध्यम से उसे हर प्रकार के अन्याय और शोषण से सरकार मुक्त कर देगी । लेकिन लोकतंत्र के नाम पर दिखाये गये स्वर्णिम स्वप्न लोकतंत्र की भ्रष्ट व्यवस्था के द्वारा कुचल कर रख दिये गए । नेताओं में स्वतन्त्रता पूर्व की त्याग, सेवा, सम्पर्ण और देश प्रेम की भावनाएँ खत्म हो गयीं । इनके स्थान पर पद और अधिकार का लोभ तीव्र हो गया। यहाँ पद और अधिकार की प्राप्ति के लिए उचित-अनुचित सभी प्रकार के प्रयास होने लगे। लोकतंत्रिक मूल्यों का पतन हो गया। इन सब के परिणामस्वरूप देश की जनता का विश्वास इन नेताओं पर से उठने लगा। १९६० के बाद चीन और पाकिस्तान के आक्रमण, अकाल, बाढ़, महामारी आदि के साथ-साथ भाई-भतीजावाद, बेरोजगारी, घूसखोरी, भ्रष्टाचार आदि ने जनता की बची-खुची आस्था को भी मिटाकर रख दिया। हर प्रकार से उपेक्षित पीड़ित, शोषित, कुंठित आम आदमी अपनी मुक्ति के मार्ग स्वंय खोजने लगा। जनमानस इस भ्रष्ट व्यवस्था के विरूद्द अपनी आवाज बुलन्द करने के लिए विवश हो गया। मध्यवर्गीय लोगों और निम्नवर्गीय लोगों पर इसका सबसे अधिक प्रभाव पड़ा। इन लोगों ने अपने टूटे हुए सपनों की पीड़ा को अत्यन्त नज़दीक से देखा और महसूस किया।

समकालीन राजनीतिक चेतना को उजागर करने वाली प्रमुख कहानियॉ हैं :-- 'मुर्दा मैदान' (रामदरश मिश्र), 'अर्थतंत्र' (सतीश जमाली), 'परमात्मा का कुत्ता' (मोहन राकेश), 'दौने की पत्तियाँ' (मार्कण्डेय)।

(i) 'मुर्दा मैदान'- रामदरश मिश्र

'मुर्दा मैदान' कहानी में रामदरश मिश्रजी ने पुलिस-तंत्र एवं देश की चुनावी प्रक्रिया पर करारा व्यंग्य किया है । कहानी के प्रारंभ में लेखक उस 'मुर्दा मैदान'

की ओर संकेत करता है जहाँ पर शहर का कूड़ा-कचरा और मरे हुए जानवरों को फेंका जाता है। कुछ लोग कूड़े कचरे से सामान बटोरकर अपना पेट भरते हैं। भोला नामक बारह साल का लड़का है। वह भी इसी उद्देश्य से यहाँ आता है। माँ की मृत्यु के बाद पिता अकेले मज़दूरी करके भोला और उसकी बहन लक्ष्मी का पेट भरते हैं। भोला के पिता उन्हें खूब पढ़ाना चाहते हैं क्योंकि गरीबी के कारण जो नरक उन्होंने भोगा है, वह उनके बच्चों को न भोगना पड़े ।

लक्ष्मी बड़ी होकर काम पर जाने लगती है जिससे पिता का बोझ थोड़ा कम हो सके। एक दिन लक्ष्मी काम से नहीं लौटती,तो भोला के पिता थाने में रिपोर्ट लिखवाने जाते हैं,परंतु पुलिस अधिकारी यह कह कर वहाँ से उसे भगा देता है कि " तेरी बेटी कोई हूर नहीं है कि कोई उठा ले जायेगा । चले आते हैं रात-विरात जान खाने।" [10] कुछ दिनों के बाद लक्ष्मी की लाश मिलती है। पुलिस भोला के पिता पर इल्जाम लगाती है कि उसी के अत्याचार से तंग आकर लक्ष्मी ने आत्महत्या की है। पुलिस वाले भोला के पिता को बंदी बनाकर शारीरिक-मानसिक कष्ट देते हैं। अधिक कष्ट से बचने के लिए भोला का निर्दोष पिता उन्हें रिश्वत देता है तब कहीं जा के पुलिस के अत्याचारों से उसे मुक्ति मिलती है ।

भोला के पिता पर हुए पुलिस के अत्याचारों को देखकर पड़ोस में रहने वाला 'मलखा' सभी को एकत्रित कर कहता है कि पुलिस के खिलाफ संगठित होकर हमें कुछ करना चाहिए। लेकिन कोई आगे बढ़ने को तैयार नहीं, सब अपने-अपने घरों में चले जाते हैं। पिता कि नाजुक हालत से दुःखी और भूख से परेशान भोला आज इस मुर्दा मैदान में आता है। 'मुर्दा मैदान' के आसपास आज काफ़ी भीड़ है, क्योंकि मंत्रीजी चुनाव के सिलसिले में इस इलाके में आ रहे हैं।भोला के हाथ में भी चुनावी प्रचार का एक काग़ज आता है जिस पर लिखा होता है कि " हमारी सरकार अमीर-गरीब के भेद को मिटा कर रहेगी।अब अमीरों का जोर जुल्म नहीं चलने पायेगा। गरीबों को अच्छा खाने-पीने, पहनने, अच्छे मकान में रहने का अधिकार होगा, उनके बच्चों को पढ़ने की सभी सुविधाएँ दी जाएगी ।" [11] भोला जैसे ही रास्ता पार करके घर जाने लगता है कि तभी मंत्री महोदय की कार से टकरा जाता है। मंत्री और पुलिस अधिकारी बिना उसकी ओर देखे आगे चले जाते हैं और गरीब भोला वहीं रास्ते पर बेहोश पड़ा रहता है ।

इस प्रकार गरीबों की दुर्दशा और गरीबों के हिमायती कहे जाने वाले राजनेता और पुलिस का गरीब जनता के प्रति उदासीन, स्वार्थी, भ्रष्ट व्यवहार को दर्शाया गया है ।

'मुर्दा मैदान' कहानी में निरूपित चेतना :-

'मुर्दा मैदान' कहानी समकालीन भ्रष्ट शासन व्यवस्था का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करती है। आज गॉव हो या शहर, पुलिस निरीह गरीब, निर्दोष, शोषित लोगो पर अत्याचार करती है और सत्ताधारी मंत्रीयों और धनवानों आदि का साथ देकर उनके हाथों को मजबूत करती है। यह पुलिसतंत्र अमीरों और नेताओं के हाथों की कठपुतली बना हुआ है, जो समाज के रक्षक हैं, वही उसके भक्षक बन देश को खोखला कर रहे हैं ।

भोला की माँ की मृत्यु के बाद पिता की सहायता के लिए उसकी बहन लक्ष्मी काम पर जाती है। उसके एक दिन धर न लौटने पर उसके पिता पुलिस में रिपोर्ट लिखाने जाता है,परंतु उसकी रिपोर्ट न लिख पुलिस द्वारा उसे वहॉ से भगा दिया जाता है। बाद में लक्ष्मी की लाश मिलने पर भोला के पिता पर ही झूठा आरोप लगाया जाता है कि उसी के कारण लक्ष्मी ने आत्महत्या की।पिता को पुलिस वाले खूब मारते हैं और डरा, धमकाकर रूपये वसूल कर छोड़ देते हैं। पिता की इस हालत को देख,भोला आज मुर्दा मैदान में कुड़े-कचड़े में से सामान उठाने जाता है। आज वहाँ भीड़ है क्योंकि चुनाव के चक्कर में मंत्री आने वाला है।भोला के हाथ में एक काग़ज लगता है जिसमें लिखा था कि अब अमीर-गरीब का भेद-भाव खत्म होगा। भोला जैसे ही रास्ता पार करने लगता है तो वह मंत्री की कार से टकरा कर गिर जाता है। मंत्री-महोदय उसे नजर अंदाज कर आगे चल देते हैं,पुलिस भी खामोश खड़ी इस धटना को देखती है,परन्तु मंत्री के खिलाफ कोई कार्यवाही नहीं करती। इस प्रकार आम जनता के कष्ट और पीड़ाओं को बताते हुए लेखक सरकारी कार्य-व्यवस्था की त्रुटियों के प्रति ध्यान आकर्षित करते हैं।

लेखक बताना चाहता है कि जिस देश के मंत्रीगण और पुलिसतंत्र ही कानून के भक्षक हैं,वहॉ समाज की रक्षा कौन करेगा? ये लोग मंत्री और पुलिस के रूप में छिपे हुए तस्कर हैं जो भ्रष्टाचार,घूसखोरी,रिश्वत,भाई-भतीजावाद आदि को बढ़ावा देकर,देश की न्याय और कानून व्यवस्था, समाज की सुख-शांति में बाधा उपस्थित करके राष्ट्र को खोखला बना देते हैं। सरकारी आधिकारियों और पुलिस का प्रथम कर्तव्य दीन-दुखियों की सहायता करना है। जबकि हकीकत में गरीब के प्रति उनका व्यवहार निदर्यी और कठोर होता है । इस प्रकार लोकतांत्रिक राष्ट्र में सरकार और जनता के बीच की दूरियॉ राष्ट्रीय गौरव के लिए कलंक समान कही जा सकती है।

(ii) 'अर्थतन्त्र' - सतीश जमाली

'अर्थतन्त्र' कहानी में सतीश जमाली ने पूरी समाज व्यवस्था और राजनैतिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह प्रकट किया है।लेखक यह भी बताना चाहता है कि आज कहीं न कहीं प्रत्येक युवक के मन में आक्रोश की भावना विद्यमान है ।

लेखक आज सुबह से ही रास्ते में धूम रहा था। वह देखता है कि एक जगह बहुत भीड़ है। जब उसे मालुम पड़ता है कि प्रधानमंत्री आने

वाले हैं तो वहाँ जाना लेखक को उचित न लगा। फिर भी वहाँ पहुँचकर दूर खड़े रहकर वह सोचता है कि देश के सभ्य,शिक्षित लोग इन झूठे,स्वार्थी मंत्रियों का भाषण क्यों सुनने आये हैं ? लेखक इन सब लोगों को देखकर हर समय गुस्साया रहता था,"कि सब साले मरियल हैं, कोई हिम्मत ही नहीं करता कि इन कुछ को कत्ल कर दे या गोली मार दे।"[12] वह दूर खड़ा हो भाषण सुनने लगता है कि तभी तीन धमाके होते हैं लोगों में भगदड़ मच जाती है।कई लोग जख्मी हो जाते हैं।तभी पुलिस वाले लेखक को प्रधानमंत्री की हत्या के झूठे आरोप में गिरफ्तार कर लेते हैं। लेखक देखता है कि सभी लोग उसकी तरफ देखकर उससे ईर्ष्या कर रहे हैं कि कत्ल उन्होंने क्यों नहीं किया।पुलिस अधिकारी बिना कुछ लेखक से पूछे उसे अपने साथ ले जाते हैं। लेखक मन ही मन प्रसन्न है कि किसी ने तो शुरूआत की इन स्वार्थी, भ्रष्ट लोगों को खत्म करने की । लेखक सोचता है कि "कातिल उसको निश्चय ही कितना बड़ा यश दे गया है।वह पता नहीं कैसे घुट-घुट कर मर जाता और कोई पूछता भी नहीं। "[13] वह कातिल का मन ही मन धन्यवाद अदा करता है क्योंकि उसने लेखक पर दोहरा उपकार किया था एक तो ऐसे लोगों का खात्मा किया दूसरा उसे यश दे गया ।

'अर्थतंत्र' कहानी में निरूपित चेतना :--

'अर्थतंत्र' कहानी में देश की व्यवस्था के प्रति जनता के दबे-छिपें आक्रोश का परिचय प्रस्तुत है। 'अर्थतंत्र' कहानी में पूरी समाज व्यवस्था और राजनैतिक व्यवस्था के प्रति व्यक्त विद्रोह एक ढंडई स्थिति अथवा नपुसंक विद्रोह में परिणत न होकर एक खूनी क्रांति का आह्वान करती है।[14] आज हमारे देश के अधिकांश नेतागण और मंत्री राष्ट्र और जनता की उपेक्षा कर अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए जनता को झूठे आश्वासन देकर गुमराह करने में लगे हुए हैं। आज नेताओं का राजनैतिक जीवन दोहरे व्यक्तित्व से परिचालित है।अत:जनता में आक्रोश की भावना दिन-प्रतिदिन तीव्र होती जा रही है, इसी कारण जनता ने अपने हित-अहित के विषय में स्वयं विचार करना शुरू कर दिया है।

लेखक जब टहलने के लिए निकलता है तो देखता है कि रास्ते में बहुत भीड़ है क्योंकि प्रधानमंत्री आने वाला है। उसे आज की शासन प्रणाली से धृणा है वह वहाँ से जाना चाहता है। अभी वह सोच ही रहा होता है कि तभी बम फटते हैं और प्रधानमंत्री की मृत्यु के आरोप में उसे गिरफ्तार कर लिया जाता है। अपराधी न होने पर भी वह अपराध स्वीकार कर लेता है क्योंकि चलो किसी ने तो शुरूआत की इन भ्रष्ट लोगों को रास्ते से हटाने की।इन भ्रष्ट और झूठे नेताओं को शिक्षा देने का आरंभ तो किसी से हुआ ।

लेखक ने यह बताने का यत्न किया है कि आज समाज का प्रत्येक व्यक्ति इन नेताओं, मंत्रिओं के झूठे भाषणों, आश्वासनों, भ्रष्टाचार, गबन, घुसखोरी,

भाई-भतीजावाद आदि के कारण परेशान हैं। किसी अज्ञात अपराधी द्वारा प्रधानमंत्री की हत्या होने पर लेखक झूठा अपराध स्वीकार कर उसके प्रति नतमस्तक होता है और देखता है कि वहाँ खड़े लोग उसे आदर की निगाह से देख रहे हैं। वह मेहसूस करता है कि इस दूषित शासन प्रणाली से वह ही नहीं बल्कि सभी परेशान है,आवश्यकता थी शुरूआत की ।लेखक का मानना है कि भारतीय जनता अधिक उदार और शांत है, उन्हें चाहिए कि नेताओं के कुकर्मों की सज़ा उन्हें जनता द्वारा तुरन्त प्राप्त हो।

आज राजनैतिक नेताओं तथा मंत्रियों के चरित्र में सुधार किए बिना देश की जनता सदैव अभावों कष्टों में पिसती रहेगी क्योंकि इनके भ्रष्टाचार के परिणाम स्वरूप ही देश की चतुर्दिशाओं में विकास नहीं हो पा रहा है। राष्ट्रीय एकता और अखण्ड़ता के लिए यह आवश्यक है कि हम ऐसे भ्रष्ट नेताओं और मंत्रियों को शासन की बागडोर न सौंपें। लेखक ने जनता के आक्रोश को नया बल देने का यत्न किया है।

(iii) 'परमात्मा का कुत्ता'- मोहन राकेश

'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में मोहन राकेश ने सरकारी दफ्तरों में व्याप्त भ्रष्टाचार का उल्लेख किया है । वर्तमान शासनतंत्र, अफसरशाही और दफ्तरशाही की विड़म्बना ने व्यक्ति को पीड़ित किया है ।"[15]

दफ़्तर खुला हुआ है । अन्दर कमरों में फाइलें धीरे-धीरे एक मेज से दूसरे मेज पर जा रही हैं। बाबू लोग मेज के पास जमा होकर चाय पी रहे हैं। कमिश्नर साहब आते हैं कुछ कागजों पर दस्तख्त कर पत्रिका पढ़ने लगते हैं ।

सुरजीत सिंह वल्द गुरमीत सिंह की फाइल एक मेज से एक्शन के लिए दूसरे मेज पर इसलिए जाती है क्योंकि उसने पाँच रूपये बाबू को रिश्वत दी थी । दफ़्तर के बाहर बहुत से लोग आज भी अपने केस की पैरवी के लिए आए हुए हैं तभी चार नए चेहरे और आते हैं, उनमें से अंधेड़ व्यक्ति अपनी पगड़ी जमीन पर बिछाकर ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगता है कि दो साल से अर्जी दे रखी है कि जमीन के नाम पर जो गड्डा उसे एलाट किया गया है उसकी जगह कोई दूसरी जमीन दो सौ मरले की जगह, पचास मरले दो, पर ज़मीन दो। यह देख चपड़ासी उसे चुप रहने को कहता है, तो वह और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगता है। उसके साथ उसके भाई की विधवा है, उसके भाई को पाकिस्तान में टॉगो से पकड़कर चीर दिया था, साथ ही भाई का लड़का है जो टी.बी. का रोगी है, भाई की लड़की है जो ब्याहने योग्य हो गई है। ऑफिस के बाबू भी उसे चुप कराने के उद्देश्य से बाहर आते हैं परन्तु वह चुप नहीं होता, कहने लगता है कि " तुम लोग सरकार के कुत्ते हो, हम लोगों की हड्डियॉ चूसते हो और सरकार की तरफ से भौंकते हो। मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ उसकी तरफ से भौंकता हूँ। "[16]

कमिश्नर के बाहर आने पर वह अपना केस उन्हें समझा देता है और उनके पीछे-पीछे दफ़्तर में चला जाता है। आधे घण्टें के बाद वह मुस्कराता हुआ बाहर निकलता है । लोगों को अपनी तरफ देखते हुए कहता है कि " चूहों की तरह बिटर-बिटर देखने से कुछ नहीं होगा। भौंको-भौंको, सबके सब भौंको,अपने आप इनके कान फट जॉएगे ।"[17]

'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में निरूपित चेतना --

'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में लेखक ने भारत विभाजन के बाद शरणार्थियों के पुनर्वास की समस्या पर प्रकाश डाला है। " साथ ही राकेशजी ने दफ्तर के बाबूओं की निष्क्रियता, घूसखोरी आदि विसंगतियों पर प्रहार किया है। "[18] देश की सरकारी व्यवस्था की त्रुटियों को उजागर किया गया है।

सरकार ने शरणार्थियों के पुनर्वास के लिए हर सम्भव कार्य किए परन्तु सरकारी दफ्तरों के कर्मचारियों ने भ्रष्टाचार एवं घूसखोरी को बढ़ावा दिया।ये कर्मचारी रिश्वत लेकर ही शरणार्थियों का काम करते थे, और जिस के पास रिश्वत के लिए पैसे नहीं होते थे उनकी फाइलें सुनवाई के लिए दूसरे टेबल पर जाती ही नहीं थी।लोग हर दिन सुबह से ही अपने केस की पैरवी के लिए आ जाते थे।आज जब एक अधेड़ व्यक्ति अपने भाई की विधवा और उसके टी. बी. के बीमार लड़के और जवान लड़की के साथ आ दफ्तर के आगे ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगता है।यह देख दफ़्तर के सभी कर्मचारी उसे चुप करने का प्रयत्न करते हैं।परन्तु वह चुप नहीं होता,यह देख दफ़्तर के कर्मचारी उसका काम जल्द कर उससे छुट्टी पाते हैं।

लेखक ने अधेड़ व्यक्ति के माध्यम से यह बताया है कि हमें अपने हक़ के लिए चुप नहीं रहना चाहिए बल्कि उसके लिए आगे बढ़कर लड़ना चाहिए तभी हम सब मिलकर इन सरकारी दफ्तरों में फैले हुए भ्रष्टाचार का अन्त कर सकेंगे ।

इस कहानी में भ्रष्टाचार का खुल कर विरोध किया गया है क्योंकि यह आज देश की गम्भीरतम समस्या बनी हुई है,देश की प्रगति के लिए यह घातक सिद्ध हो रही है।देश की शासन-प्रणाली सुचारू और सरल होनी चाहिए जिससे एक आम आदमी को अपने काम के लिए परेशान न होना पड़े। लेकिन सरकारी कर्मचारी को रिश्वत के झूठन की ऐसी आदत पड़ गई है कि बिना इसके एक कागज़ भी आगे बढ़ नहीं पाता। अत:लेखक ने इस शासन-व्यवस्था के विरूद्ध विरोध के स्वर को बुलंद किया है।

(iv) 'दौने की पत्तियाँ' - मार्कण्डेय

'दौने की पत्तियाँ' कहानी में मार्कण्डेय जी ने शासन व्यवस्था के भ्रष्ट रूप को चित्रित करके उसके परिणामस्वरूप आम आदमी की मुश्कीलों का वर्णन किया है। भोला निम्न जाति का होते हुए भी गॉव से थोड़ी दूर पर अपनी झोपड़ी बनाता है। भोला की मेहनत के कारण उसका खेत गॉव में 'दुलहिन' के नाम से पुकारा

जाता है।लेकिन आज भोला परेशान है क्योंकि उसका एकमात्र खेत गाँव में बन रही नहर के बीच आने जा रहा है ।

महीने भर पहले यह नहर गॉव में बननी शुरू हुई थी।लेकिन जब इंजीनियर इसे गॉव के पूंजीपती तिवारीजी के खेत से निकालने लगता है तो तिवारीजी जिन्होंने सिंचाई मिनिस्टर को पिछले चुनावों के समय धन एवं जनबल से पूरी सहायता प्रदान की थी,उनके पास अपने आदमी को भेज देते हैं। जिससे की अपने खेत को बचा सकें। तार द्वारा दूसरे ही दिन इंजीनियर को बुलाया जाता है और आदेश दिया जाता है फि "नहर इधर-उधर घुमाकर खेत बचा लिया जाए। "[19]

इंजीनियर गॉव वापिस आकर हॅसते हुए कहता है कि "इस नन्हें से काम के लिए इतना बड़ा पॅवारा खड़ा करने की क्या जरूरत थी ?यहीं हज़ार रूपये और एक मुर्गा, भैंस,जो अभी दी है, तभी दे देते तो बिना लखनऊ गये ही काम हो जाता ।"[20] भोला की पत्नी गुलाबी ने काफी मंसूबे बांधे थे,कि जब नहर निकलेगी तो वह खूब तरकारियॉ बेचा.करेगी। सुबह शोर को बढ़ता हुआ देख जब वह बाहर निकलती है तो देखती है कि उसका आधा खेत साफ हो चुका है।नहर धे खेत तक पहुॅच चुकी है। वह दौड़ती हुई इसके विरोध मे चिल्लाती है परन्तु उसकी कोई एक नहीं सुनता ।

भोला रात के अन्धेरे में तिवारी को मारने जाता है कि उसकी वज़ह से उसका खेत नहर में चला गया,कोठी के पास पहुँचकर सोचता है कि तिवारीजी ने तो अपना खेत बचाया है। सारा दोष इंजीनियर का है। फिर सोचता है कि नहीं सरकार दोषी है, लेकिन सरकार को क्या मालुम कि मेरे पास एक ही खेत है,जिसे मैंने पाँच साल आधा पेट खाना खाकर खरीदा है।सुबह होते ही उसे गिरफ्तार कर लिया जाता है। गुलाबी निसहाय अवस्था मे खड़ी रह जाती है क्योंकि अब उसके पास दौने की पत्तियॉ भी नहीं रहीं जिससे की वह अपना और अपने बच्चे का पेट पाल सके ।

'दौने की पत्तियाँ 'कहानी में निरूपित चेतना --

मार्कण्डेयजी की कहानी 'दौने की पत्तियाँ 'में भूस्वामियों की सांमती मानसिकता शोषण और अत्याचार के विरूद्ध आम आदमी का दु:खी स्वर,राजतंत्र की भ्रष्ट नीतियों और भाई-भतीजावाद के कारण गरीबों की दयनीय दशा का वर्णन है। साधारण मनुष्य संघर्ष करता भी है तो समाज की ताकतें उसे दबा देती हैं। गॉव के पूॅजीपतियों, देश के भ्रष्ट मंत्रियों और रिश्वतखाऊ सरकारी कर्मचारियों की मिलीभगत के कारण आम मनुष्य का जीवन कष्टमय और उनकी दशा दयनीय होती जा रही है। भोला ने अपना पेट काटकर खेत खरीदा । वह अपने एक बीगाह खेत को कठिन मेहनत से गॉव का सबसे उपजाऊ खेत बनाता है। भोला और उसकी पत्नी खुश है कि नहर निकलने पर वह अधिक तरकारी बेचा करेंगे।गाँव का संपन्न तिवारी जब देखता है कि इंजीनियर उनके खेत से नहर निकालने जा रहा है तो वह

तुरंत अपने एक आदमी को सिचाँई मिनिस्टर के पास भेजता है, जिसकी तिवारी ने पिछले चुनावों में धन और जन से भरपूर सहायता कर जितवा दिया था। मंत्री तुरंत इंजीनियर को आदेश दे नहर के रास्ते को मुड़वा देता हैं ।

भोला और उसकी पत्नी से नहर के आने से जो मंसूबे बंधें थे वह सब इन सरकारी नीतियों के तहत कुचल कर रख दिये जाते हैं। रोने चिल्लाने के बावजूद भी भी नहर को इन के खेत से निकाल दिया जाता है।लेखक यहाँ बताना चाहता है कि सरकार ने स्वतंत्रता के पश्चात गाँव के उद्धार को ध्यान में रख पंचवर्षीय योजनाओं का लागू किया। लेकिन इन पंचवर्षीय योजनाओं का लाभ गॉव के पूजीपतियों तक ही सीमित हो कर रह गया । दूसरा यह की देश के भ्रष्ट नेताओं और प्रशासन में फैले भाई-भतिजावाद और घूसखोरी आदि के कारण सरकार द्वारा चलाई गई योजनाएँ गाँव के गरीब जनसामान्य तक पहुँच ही नही पाई।यह कहानी एक और भोला की दयनीय दशा एवं संघर्षमय आर्थिक परिस्थितियो को उजागर करती है तो दूसरी तरफ व्यवस्था की उस कमजोरी को भी उजागर करती है जो पूँजीपतियो की बात सुनते हैं और उनकी मदद करते हैं।ये मंत्री जो जनता की सरकार होने का ड़ांका पीटते है,और जनता के वोटों से चुनाव जीतते हैं।लेकिन वो चुनाव जीतने के बाद जनता को भूलकर अपना व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्ध करते हैं। लेखक का उद्देश्य यहाँ का भ्रष्ट प्रशासन और उसकी नीतियों को दिखाकर जनमानस को विद्रोह के लिए आन्दोलित करना हैं।

राजनीतिक चेतना से सम्बन्धित उपर्युक्त चार कहानियों के परिचयात्मक विवरण के आधार पर निष्कर्ष रूप से निम्नलिखित तथ्य पाये जाते हैं---

(i) राजनेताओं के दोहरे और झूठे व्यक्तित्व।

(ii) आम जनता की पीड़ा,परेशनियाँ।

(iii) शासन-व्यवस्था के विभिन्न अंगो मै फेला भ्रष्टचार, उत्तरदायित्व के निर्वाह में पायी जाने वाली शिथिलता एवं उदासीनता,निष्क्रीयता आदि ।

रामदरश मिश्र ने अपनी कहानी'मुर्दा मैदान' मे यह दिखाने का यत्न किया है कि भारतीय प्रजातंत्र आज स्वार्थ और भ्रष्टचार के दलदल मे धंसा हुआ है। प्रत्येक सत्ताधारी राजनेता इस प्रयत्न में लगा है कि प्रजा के वोट को किस प्रकार जीतें?वह देश की गरीब जनता को राशन की बजाय झूठे आश्वासन भरे भाषण दे गुमराह कर रहा है।आज के नेताओं को देश की समस्याओं की प्रवाह नही है परवाह है तो सत्तामे बने रहने की।देश के न्याय और कानून व्यवस्था,जनता के जानमाल की सुरक्षा पुलिस करती हे। वह भी आज इन राजनीतिज्ञों के नक्शे-कदम पर चल कर जनता की रक्षक न बनकर भक्षक बनी

हुई है। साथ ही लेखक ने आम जनता की दयनीय दशा,पीडा तथा जीवन के संकटों का मार्मिक चित्रण किया है। भोला का दु:खी पिता अपनी संतानों की सुरक्षा भी आज के भ्रष्ट राजेताओं और शिथिल पुलिसतंत्र के कारण नहीं कर पाता है।भोला का पिता देश की गरीब आम जनता का प्रतिनिधित्व करता है ।

सतीश जमाली ने अपनी कहानी 'अर्थतंत्र'में आज के राजनीतिज्ञों के प्रति जनता के आक्रोश को चित्रित किया है। स्वतंत्रता से पहले या स्वतंत्रता संग्राम के दौरान जनता को अपने चुने हुए प्रतिनिधियों पर पूरा भरोसा होता था। राजनेता भी जनता की सुख-सुविधाओं और देश की उन्नति को ध्यान में रखकर कार्य करते थे।लेकिन आज के अधिकांश नेताओं की नैतिकता स्वार्थ से जुड़ गयी है, सत्ता से सम्बन्धित होकर रह गई है।यह देश और जनता की अपेक्षा अपनी स्वार्थ सिद्धि में अधिक व्यस्त हैं। इनके झूठे आश्वासनों, कार्यो आदि को देख जनता में आक्रोश की भावना पनप रही है।जनमानस इनके अत्याचारों से तंग आकर कानून को स्वंय अपने हाथों में ले रहा है। इस प्रकार भ्रष्ट राजनीति से व्यथित जनता के आक्रोश के प्रति सरकार को सावधान करने का यत्न किया है।जनता ने अब तक खुब सहा है अब हिंसात्मक प्रतिक्रिया द्वारा अपना रोष प्रकट करने का समय आ गयाहै।

'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में लेखक श्री मोहन राकेश ने सरकारी दफ़्तरों में फैले हुए भ्रष्टाचार को दिखाने का एक सफल यत्न किया है। विभाजन के पश्चात जब सरकार ने शरणार्थियों को स्थापित करने के लिए जमीनें दीं, परन्तु सरकारी कर्मचारियों की निष्क्रियता, अपने कर्तव्य के प्रति उदासीनता एवं घूसखोरी की प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप समाज में अभावग्रस्त , पीड़ित लोग सरकारी सहायता के बावजूद भी अपने जीवन को ऊपर उठा नहीं पाते । सरकारी अधिकारीयों के भ्रष्ट चरित्रों ने मध्यमवर्गीय सरकारी कर्मचारियों को भी घूस लेने के लिए आज प्रेरित किया । अत: वे लोग भी दीन-दुखियों की समस्याओं की ओर ध्यान न देकर अपनी जेबें भरते हैं ।

लेखक ने इस कहानी के माध्यम से आज के सरकारी दफ़्तरों के भ्रष्ट चित्रों को खींच कर हमारे सामने प्रस्तुत किया है । सामान्य गरीब मनुष्य की स्थिति सरकारी दफ़्तरों में कितनी दयनीय होती है,इसे भी दिखाने का यत्न किया है। कहानी में बूढ़े व्यक्ति के माध्यम से यह बताया है कि देश के प्रत्येक मनुष्य को स्वंय आगे बढ़कर अपने अधिकारों की प्राप्ति और रक्षा के लिए लड़ना होगा ।

'दौने की पत्तियाँ ' में यह दिखाने का यत्न किया है ,कि सरकार ने स्वतंत्रता के पश्चात गॉवों के विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाओं को लागू

किया लेकिन भ्रष्ट प्रशासन व्यवस्था के कारण सरकार की सुविधाओं का लाभ पूँजीपतियों तक ही सीमित होकर रह गया ।

तिवारी पूंजीपतियों का प्रतीक है,जो भ्रष्ट राजनेताओं से मिलकर अपना स्वार्थ सिद्ध करके गरीब जनता पर अन्याय करता है।परिणामस्वरूप आम जनता का प्रतीक, भोला अपनी जमीन गवाँकर दीन, दु:खी और पीड़ित होता है ।

लेखक स्वार्थी, भ्रष्ट, अनैतिक, लोभी,राजनेता, अफसरशाही और सामंती पूँजीवादियाँ के भ्रष्ट चरित्रों को बेपर्दा कर उनके असली स्वरूप से अवगत कराकर जनमानस को सावधान करने की चेष्टा की है।यह दर्द भोला का ही नहीं बल्कि प्रत्येक गरीब भारतीय का दर्द है और उसकी एक मात्र दवा है संगठित सामूहिक संघर्ष।

राजनीतिक परिवेश से सम्बन्धित उपर्युक्त कहानियों में असफल सरकारी नीतियों, भ्रष्ट राजनेताओं के कार्य-व्यापार ,सरकारी अर्ध-सरकारी तंत्र में फैली रिश्वतखोरी तथा समाज में फैली व्याप्त हिंसा, कानून और न्याय की अराजकता,जनता के प्रति कर्तव्य - पालन में पुलिस की उदासीनता एवं निष्क्रियता आदि का सफल अंकन कहानीकारों ने किया है ।

२) सामाजिक चेतना का स्वरूप :-

भारतीय समाज अपने प्राचीनकाल से वर्णव्यवस्था की नींव पर खड़ा है । समाज के सामूहिक उत्थान और व्यवहार की सरलता और सुगमता के उद्देश्य से भारतीय मनीषियों द्वारा स्थापित यह वर्णव्यवस्था अपने मूल रूप में अतिउत्तम थी लेकिन कालान्तर में परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ अनेक विकृतियों से ग्रस्त हुई। कालक्रम से चार वर्ण अनेकानेक वर्णो में विभाजित होता गया।अनेक विदेशी जातियों के आक्रमण के कारण इनमें संकीर्णता और जटिलता बढती गई। परिणाम-स्वरूप वर्ग भेद, छुआछूत, बालविवाह आदि विभिन्न दूषण भी उभरने लगे।आधुनिक युग तक आते-आते समाज की यह वर्णव्यवस्था चरमरा उठी।समय-समय पर इसमें सुधार के प्रयत्न भी हुए लेकिन पतनोन्मुख समाज को स्वस्थ और सशक्त व्यवस्था न दे सके। सदियों से सामाजिक अन्याय, अत्याचार और उपेक्षा से पशुवत जीवन जीने वाले समाज के पिछड़े हुए लोगों के उत्थान के लिए सरकारी योजनाएँ बनी,समाज सुधारकों ने अविरत प्रयत्न किये,कई सामाजिक आन्दोलन हुए। आज इन सबके अतिरिक्त संस्कृति के प्रचार-प्रसार युक्त प्रभाव के कारण दलित वर्ग को उठाने, उबारने तथा सामाजिक सम्मान के योग्य बनाने के यत्नों का सुखद परिणाम फलीभूत होता दिखाई दे रहा है। समकालीन समाज 'अर्थ' की महत्ता के परिणाम स्वरूप धनी वर्ग, मध्यमवर्ग और श्रमजीवी वर्ग में विभाजित हो गया है। आज मध्यम वर्ग और श्रमजीवी वर्ग अधिक मात्रा

में संघर्षशील,पीड़ित और कुंठित दिखाई दे रहा है।श्रमजीवि वर्ग आर्थिक रूप से अभावग्रस्त रहकर समाज के सम्पन्न वर्ग द्वारा शोषित रहा है।समाज की असमान वर्ग-व्यवस्था देश के विकास में बाधक सिद्व हो रही है ।

आधुनिक काल में नवीन-शिक्षा प्रणाली से प्रभावित युवक-युवतियों ने नई सुधारवादी विचारधारा से प्रेरित होकर प्राचीन समाज व्यवस्था के प्रति विद्रोह की भावना को जन्म दिया है । अत: आज समाज-व्यवस्था का संक्रमण रूप पाया जाता है । दूसरे , स्वतन्त्रता के पश्चात से बढ़ते औधोगिकरण, निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या और आर्थिक परिस्थितियों से विवश , सामान्य मनुष्य अपने संयुक्त परिवार के दायित्व का निर्वाह करने में असमर्थ होने के परिणाम स्वरूप संयुक्त परिवार का विघटन होने लगा है। समाज की परिवारिक विघटन की स्थति ने भी अनेक समस्याओं को जन्म दिया है। तीसरा, सदियों से प्रताड़ित एंव बहिष्कृत नारी, शिक्षित और स्वाधीन होकर गृह सीमाओं को लांघकर अध्यापिका, डॉक्टर, वकील, राजनीतिक नेता के रूप में प्रशासनिक कार्यों में पुरूष की भाँति सक्रिय भाग ले रही हैं , जो इस युग की महान उपलब्धि कही जा सकती है। आधुनिक शिक्षा तथा शिक्षा के प्रचार-प्रसार के परिणामस्वरूप स्त्री के कंधों पर न केवल पुरूष के समान दायित्व आ पड़ा है बल्कि उससे कुछ अधिक ही निर्वाह कर रही है। स्त्री न केवल नौकरी कर घर की अर्थव्यवस्था में पति की सहायता करती है बल्कि घर की आन्तरिक व्यवस्था भी देखती है । ऐसी स्थिति में परिवार और समाज का यथायोग्य सहयोग न मिलने के कारण नारी का जीवन अधिक संघर्षशील एवं तनावयुक्त होकर पीड़ित तथा दु:खी होता जा रहा है । नारी-व्यक्तित्व के नये रूप एवं उनकी मनोवेदना, उसकी सामर्थ्यता तथा समाज और देश के विकास में उनके सार्थक योगदान को उजागर किया गया है ।

दहेज की समस्या आज भी समाज में पनपी हुई है । आर्थिक रूप से कमजोर निम्न-मध्यमवर्ग और मध्यमवर्ग इसका सबसे अधिक शिकार बना हुआ है । दहेज के कारण योग्य पात्र प्राप्त करने में माँ-बाप को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इतना ही नहीं अपितु विवश होकर अनमेल विवाह के लिए राज़ी होना पड़ता है । इसके परिणामस्वरूप अनेक पारिवारिक समस्याओं के निर्माण की संभावनाएँ पनपती हैं । कई बार नारी का जीवन कष्टमय हो जाता है। इसके बावजूद भी आज की नारी नें हार नहीं मानी है । वह आज अपने स्वर्णिम भविष्य को बनाने के लिए कटिबद्ध है ।

देश में प्रजातंत्रीय संस्कारों का उद्‌भव हुआ है, इसके साथ जहाँ उनके नये मूल्य जन्मे हैं वहाँ कई समस्याएँ भी उठ खड़ी हुई हैं। राष्ट्रीय नैतिकता का

इस दरम्यान अवमूलन हुआ है । राजतंत्र में आए भ्रष्टाचार के कारण मंत्रियों और नेताओं के रूप में नये सामंत पैदा हो गये हैं । इसका प्रभाव समाज के विभिन्न अंगो में व्यापक रूप से दिखाई दे रहा है। समाज में भ्रष्टाचार, शिथिल अनुशासन, रिश्वतखोरी, भाई-भतीजावाद आदि सामाजिक बुराइयों का विकास हुआ है। जो आज देश के गौरव और विकास में अवरोध उत्पन्न करता है । जिसके कारण हमारा सामाजिक जीवन पतन की गर्त में गिरता हुआ प्रतीत होता है ।

उपर्युक्त सामाजिक चेतनाओं को उजागर करने वाली कहानियों में निम्नलिखित कहानियाँ प्रमुख हैं -- 'लहू पुकारे आदमी '(मधुकर सिंह), 'बीच के लोग' (मार्कण्ड़ेय), 'उच्चाटन' (फणीश्वरनाथ रेणु), 'उपहार ' (शिवप्रसाद सिंह), 'मैं नारी हूँ ' (विष्णुप्रभाकर), 'तोहमत '(ममता कालिया), 'छोटे शहर की शकुन्तला' (ड़ॉ० पद्मशा), 'एक टुकड़ा धरती ' (कमला सिन्धवी), ' इज्जत ', 'पानी', ' सर्पदंश ', 'एक औरत एक जिन्दगी', 'एक भटकी हुई मुलाकात' (रामदरश मिश्र द्वारा लिखी गई हैं), 'बेटे की बिक्री', 'मॉग ','विद्रोह', (विवेकी राय द्वारा लिखी गई हैं) ' पीढ़ियॉ ' (राजेन्द्र अवस्थी) ।

अध्ययन की सुविधा एवं विषय की अनुरूपता की दृष्टी से उपर्युक्त सत्रह कहानियों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है --

क) जाति भेद-भाव एवं छुआछूत से सम्बंधित कहानियाँ।

ख) नारी के बदलते हुए स्वरूप और उसके जीवन की त्रासदी से संबन्धित कहानियाँ।

ग) दहेज प्रथा एवं विवाह-समस्या से संबन्धित कहानियाँ।

उपर्युक्त विभाजन के अन्तर्गत आने वाली कहानियों का परिचय एवं उनमें निरूपित चेतना का अध्ययन निम्नलिखित है--

क) जाति भेदभाव एवं छुआछूत से संबन्धित कहानियाँ :--

विश्व के प्रत्येक देश में मानव-समाज अपनी सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने के लिए किसी न किसी आधार को स्वीकार करके उसे छोटे-छोटे एकमों में विभाजित करता है । भारत की आर्य-संस्कृति में मानव समाज को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र नामक चार वर्गो में विभाजित किया गया । सामन्यतः मानव-मानव के बीच प्राचीन काल से कोई भेद नहीं था । लेकिन धीरे-धीरे यह विभाजन अधिक जटिल होता गया। प्रथम तीन वर्गों की तुलना में समाज में शूद्रों का स्थान अंतिम था अतःउसे हेय दृष्टि से देखा जाने लगा, उसकी सामाजिक महत्ता नगण्य थी। प्रथम तीन वर्गो की सेवा का उत्तरदायित्व निर्वाह करते हुए उन्हें बौद्धिक विकास के अवसर प्राप्त न थे। अतः शनैः शनैः वे दीन होते गये । काल के प्रवाह के साथ यह वर्ग अपना सामाजिक

सम्मान और मानव अधिकारों से भी वंचित होने लगा । समाज के शेष वर्ग के लोग उनके साथ पशुवत व्यवहार करने लगे । सवर्णों की गलियों में घुसने से पहले उन्हें आवाज़ देकर आना पड़ता था, न उन्हें मन्दिर में जाने का हक था,न शिक्षा प्राप्त करने का । यहाँ तक की इनकी छाया से भी नफ़रत की जाती थी । इस वर्ग की निर्धनता, अशिक्षा और विवशता का लाभ उठाकर समाज के उच्चवर्गीय लोग अमानुषी अत्याचार करते थे और आर्थिक-सामाजिक शोषण करते थे । दिन भर परिश्रम करके भी इनको इतना धन नहीं मिलता था कि दो वक्त की रोटी जुटा सकें और अपने बाल-बच्चों का उचित पोषण कर सकें।

समाज की इस बुराई को दूर करने और सदियों से अस्पृशों के प्रति उच्चवर्ण वालों के इन अत्याचारों को रोकने के प्रयत्न समय-समय पर होते रहे हैं। कबीरदास, गुरूनानक, भारततेन्दु हरिश्चन्द्र, दयाराम सरस्वती, महात्मा गाँधी आदि ने पर्याप्त प्रयत्न किए। आधुनिक काल में गाँधीजी के प्रयत्न इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। उन्होनें अछूतों को 'हरिजन ' की सम्मानीय संज्ञा दी तथा छुआ-छूत को दूर करने का वैचारिक एवं व्याहारिक यत्न किया । उनके इन विचारों का गहरा प्रभाव आज के समाज पर पड़ा है ।

आज पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव, आधुनिक शिक्षा प्रणाली और समाज सुधार आन्दोलनों द्वारा इस प्राचीन व्यवस्था पर कुठाराघात किया गया है । स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारे भारतीय संविधान ने भी सभी वर्ग के मनुष्य को भारतीय नागरिक के रूप में समान माना है। सरकार ने निम्नवर्ग के लोगों के मानवीय अधिकार की रक्षा के लिए कानूनी रूप से छुआ-छूत को अपराध घोषित किया है। परिणामस्वरूप जाति एवं वर्णव्यवस्था अब विश्रृंखलित होने लगी है। यह एक सुखद प्रयास है। लेकिन देश के अनेक पिछड़े हुए इलाकों में आज भी निर्धन, गरीब और निम्नवर्ग के लोगों की दशा पूर्ववत है। वे आज भी समाज के उच्चवर्गीय लोगों द्वारा पीड़ित एवं शोषित हैं। वहॉ कानून और आन्तरिक सुरक्षा व्यवस्था भी असफल रही है । वास्तव में यह वर्णव्यवस्था भारत की विकास-यात्रा में सदैव से ही बाधक रही है । अत: देश में छुआछूत और वर्णव्यवस्था को समाप्त करने का प्रयास न केवल सामाजिक स्तर पर हो रहा है बल्कि राजनैतिक स्तर और साहित्यिक स्तर पर भी हो रहा है ।

निम्नवर्ग,आज भी शोषित एवं पीड़ित हैं।स्वतन्त्रता के इतने वर्षो बाद भी इन्हें धृणा की दृष्टि से देखा जा रहा है।सरकार एवं सामाजिक आन्दोलनों के प्रयासों से इस वर्ग में नई चेतना का संचार तो हो रहा है लेकिन समाज का उच्चवर्ग इन्हें समानता का अधिकार आज भी नहीं दे रहा है।शहरों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार से परिवर्तन को आया है लेकिन भारतीय गॉवों में यह भेद-भाव आज भी बना हुआ है ।

छुआ-छूत एवं जातीय भेद-भाव की समस्या कानून से हल नहीं हो सकती, इसके लिए जनमानस का जागृत होना आवश्यक है।आज भी समाचार-पत्रों में आय दिन ऐसी वारदातों का वर्णन पढ़ने में आते हैं जिनमें निम्नवर्ग के लोगों पर सवर्णों द्वारा किये गए अत्याचारों के समाचार वर्णित होते हैं। यह हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक गौरव के लिए अभिशाप है।सामाजिक संगठन एवं एकता किसी भी समाज के उद्धार के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी कही जा सकती है।अत:प्रत्येक नागरिक इस सामाजिक-जागृति अभियान में अपना सहयोग और योगदान दें, ये राष्ट्रीय हित के लिए जरूरी है।

जाति भेद-भाव एवं छुआ-छूत की भावना को उजागर करने वाली कहानियाँ निम्नलिखित हैं :--

'पानी','इज्जत','सर्पदंश'(रामदरश मिश्र द्वारा लिखित),'लहू पुकारे आदमी' (मधुकर सिंह), 'बीच के लोग'(मार्कण्डेय), 'उच्चाटन'(फणीश्वरनाथ रेणु) ।

(i) 'पानी'- रामदरश मिश्र

कहानी के प्रारंभ में मंगल और उसका पुत्र रामहरख किसी काम से शहर की तरफ जा रहे थे । रास्ते में उन्होनें देखा कि रामदेव बाबू का लड़का परमेश्वर बेहोश पड़ा हुआ है और प्यास से पानी-पानी की पुकार कर रहा है । रामहरख उसे देखकर आगे चल पड़ता है। अपनी नफ़रत और क्रोध को दर्शाते हुए अपने पिता से कहता है कि इन ठाकुरों ने हमारे ऊपर कई अत्याचार किए हैं। परंतु मंगल रूक जाता है और कहता है कि कुछ भी क्यों न हो बेटा यह अपने गाँव का है । रामहरख अपने पिता को यह भी याद कराता है कि जब आपने इसके पिता के अत्याचारों से तंग आकर हलवाही छोड़ दी थी तो आपकी इन लोगों ने कितनी पिटाई की थी ।

रामदेव बाबू का लड़का परमेश्वर कुलीन है किन्तु पानी के लिए तड़प रहा है। अत: दोनों ने उसे पानी पिलाया और उठाकर घर पहुँचा दिया । ठाकुर रामदेव बाबू पूजा कर रहे थे । बेटे को पानी पिलाने की बात सुनते ही मंगल और उसके पुत्र को गालियाँ देना शुरू कर देते हैं । रामहरख को गुस्से में देखकर कहते हैं कि " इतना मारूँगा कि सब पढाई-लिखाई भूल जाओगे । "[21] मंगल और उसका बेटा दोनों वापिस चल देते हैं । परमेश्वर उन्हें आवाज़ देकर रोकते हुए कहता है कि "मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा क्योंकि पानी पीकर मैं अछूत हो चुका हूँ।"[22]ठाकुर यह सब सुन अपने पुत्र को डाँटते हैं तब परमेश्वर कहता है कि इनका क्या अपराध है इन्होंने तो मेरी जान बचाई है यदि उस समय वे मुझे पानी न पिलाते तो मैं मर जाता । यह कहते-कहते वह बेहोश हो जाता है । परमेश्वर को खाट पर सुलाकर ठाकुर रामदेव

बाबू अहोभाव से अब मंगल और रामहरख की तरफ़ देखते हैं । अपने बेटे की जान बचाने वालों के प्रति किये गये दुरव्यवहार और उनके अपमान से जैसे वे दुःखी हों ।

'पानी' कहानी में निरूपित चेतना --

इस कहानी में लेखक ने अछूत समस्या को उठाया है । अछूतों का धार्मिक और सामाजिक दोनों प्रकार से शोषण होता रहा है । हरिजनों की सामाजिक स्थिति अत्यंत दयनीय रही है । उच्चवर्ग, निम्नवर्ग को तुच्छ और छोटा समझता था। समाज के संकुचित दायरे इतने कड़े थे, कि इसके बाहर ,योग्य और समर्थ व्यक्ति भी निकल नहीं सकता था ।

नवीन शिक्षा प्रणाली एवं समाज सुधार आंदोलनों द्वारा व्याप्त जागृति ने छुआ-छूत के जाति भेद-भाव पर वज्रपात कर उसे जर्जरित कर दिया है। यह वास्तव में हमारे देश के सामाजिक विकास का अवरोधक तत्व सिद्ध हुआ है ।

हरिजन मंगल और उसका शिक्षित पुत्र जब जमींदार के पुत्र को बेहोश देखते हैं तो उसे पानी पिलाने की सोचते है। परंतु कहीं आस-पास पानी न होने की वजह से अपने लोटे का पानी पिला देते हैं। जब ज़मींदार रामदेव बाबू यह सुनते हैं,तो आग बबूला हो मंगल और उसके पुत्र को गालियॉ देकर निकल जाने को कहते हैं परंतुं जमींदार का पुत्र उन्हें रोकते हुए कहता है कि मैं भी तुम्हारे साथ चलुँगा क्योंकि मैं भी अछूत हो चुका हूँ ।

छुआछूत की प्रथा हमारे सामाजिक विकास में बाधक है लेकिन आज के इस आधुनिक युग में शिक्षित मनुष्य इन व्यवसथाओं के प्रति कोई आस्था नहीं रखता है। बल्कि वह प्रेम, मित्रता और सद्भाव रखते हुए मानवतावादी विचारों में विश्वास रखता है। शिक्षितवर्ग यह भली-भाँति जान चुका है कि जिस समाज में ऊँच-नीच का भेदभाव होता है, वह समाज किसी भी प्रकार उन्नति के पथ पर अग्रसर नहीं हो सकता ।

(ii) 'इज्जत' - रामदरश मिश्र

'इज्जत' कहानी में महेशसिंह एक निर्मम, अभिमानी और अत्याचारी ज़मींदार है । मजदूरों से कम वेतन पर रात-दिन कठोर परिश्रम करवाता है । अपने विलासी जीवन का आनंद गाँव की गरीब बहु-बेटियों की इज्जत से खिलवाड़ करके प्राप्त करता है लेकिन स्वंय कुलीन होने का मुखौटा पहन झूठी इज्जत को बनाये रखने में प्रयत्नशील है ।

एक दिन जब ज़मींदार का लड़का रजमतिया के साथ बद्तमीजी

करता है तो सभी मजदूर इकट्ठे होकर इस दुर्व्यवहार के विरूद्ध आवाज़ उठाते हैं । अशोक इस निर्णय पर पहुँचता है कि वह शहर जाकर हेड आफिस से सलाह लेगा। वह ज़मींदार महेशसिंह से कहता है कि उन्हें भी इन्सानी हक प्राप्त होना चाहिए, "इनकी बहु-बेटियों की इज्जत आपकी बहु-बेटियों से कम नहीं है। "[23]आपके लड़के को रजमतिया से मॉफी माँगनी पड़ेगी । यह सुनकर महेशबाबू क्रोधित हो जाते हैं और सबको वहाँ से चले जाने के लिए कहते हैं। मजदूरों की आँखे लाल हो जाती हैं, सभी एक साथ कहते हैं कल से वे काम पर नहीं आएगें ।

उसी रात अशोक शहर के लिए रवाना हो जाता है ताकि वे सब इकट्ठे होकर ज़मींदार महेशसिंह से संघर्ष कर सकें । रास्ते में कुँए से एक स्त्री के रोने की आवाज़ सुनाई दी । पूछने पर पता चला की वह ज़मींदार महेशसिंह की पोतहू है।अपने पति और ससुर के अत्याचारों से तंग आकर आत्महत्या करने का यत्न किया, लेकिन कुँआ सुखा था इसलिए बच गई। अशोक उसे बचाने का आश्वासन देकर सीधा ज़मींदार के पास पहुँचा और उन्हें सारी घटना बतलाई । ज़मींदार , बेटा और नौकर मिठुआ , अशोक के साथ कुँए पर आये । अब सवाल था की बहु को कौन निकाले ? अशोक ने नौकर का नाम लिया तो ज़मींदार ने विरोध करके कहा यह तो हरिजन है, हमारी बहू को कैसे छुएगा ? उन्होंने यह काम करने के लिए अशोक से बिनती की लेकिन अशोक ने मना कर दिया। अत: नौकर द्वारा ही बहू को कुँए से निकाला गया ।

घर पहुँचने पर महेशसिंह ने अशोक का शुक्रिया अदा किया और कहाँ मजदूरों के मामले में भी अब मेरी इज्जत बचाएँ । तब अशोक कहता है "यह इज्जत आपकी नहीं, स्त्री समाज की है । मेरे लिए आपकी बहू और रजमतिया की इज्जत में कोई फर्क नहीं है दोनो ही सताई हुई है पुरुषों से । " [24] यदि आपने फिर बहू पर अत्याचार किया तो मैं चुप नही बैठुँगा, मजदूरों के हक़ के लिए अवश्य संघर्ष करूँगा। वह रजमतिया जैसी सभी स्त्रियों को न्याय दिलाने के लिए संघर्षरत रहने का अपना निर्णय व्यक्त करता है ।

'इज्जत' कहानी में निरूपित चेतना --

ज़मींदारों द्वारा किये जाने वाले सामाजिक-आर्थिक अत्याचारों के चित्र 'इज्जत' कहानी में वर्णित है । बिना पारिश्रमिक दिये मजदूरो से बेगार करवाना ज़मींदार अपना हक़ समझते थे साथ ही उनकी बहू-बेटियों की इज्जत से भी वे खेलते थे। इन अत्याचारों के कारण किसानों का जीवन जीना दुर्भर था। वे निरन्तर शारीरिक एवं मानसिक रूप से ज़मींदारो द्वारा पीड़ित रहते थे ।

स्वतन्त्रता के पश्चात् सरकार ने ज़मीन से सम्बन्धित कानून द्वारा छोटे किसानों औ.र मज़दूरों के जीवन को ऊपर उठाने का यत्न किया। लेकिन ज़मींदार इन कानूनों की परवा न करके गरीबों पर अत्याचार के अपने अधिकार को मानो भोग रहे हैं। लेकिन आज मज़दूर अपने अधिकारों के प्रति जागरूक और संघर्षशील है। इसीलिए जब ज़मींदार का लड़का रजमतियां को छेड़ता है, तो सभी मज़दूर एकत्रित होकर न्याय की माँग करते हैं । जब उन्हें न्याय नहीं मिलता तो वह खेतों में काम करना भी बन्द करते हैं । वे अपने परिश्रम के उचित मूल्य की भी माँग रखते हैं।

शोषण के विरूद्ध ,मजदूरों के विद्रोह की आवाज को उठाकर लेखक ने यह बताने की चेष्टा की है कि इस वर्ग में भी अब नवीन चेतना पनप उठी है । वे अपने मानवीय अधिकार और सामाजिक समानता से परिचित हैं । इसीलिए अशोक ज़मींदार महेशसिंह से कहता है कि " मज़दूरों की बहू-बेटियों की इज्जत आपकी बहू-बेटियों से कम नहीं है । "[25] खेतीहर मज़दूर अब यह अनुभव करने लगा है कि पूंजीवादियों और ज़मींदारों के अन्याय का विरोध ही उनकी हित-रक्षा का एक मात्र मार्ग है ।अब ज़मींदारो के भय से वे मुक्त होकर संगठीत रूप से अपने अधिकारों के लिए संघर्षशील है। कहानीकार ने निम्नवर्ग में पनप रही इस नयी-चेतना का साथर्क निरूपण किया है ।देश की सामाजिक व्यवस्था में आ रहे बदलाव का सटीक चित्र यहॉ प्राप्त है।

(iii) लहू पुकारे आदमी - मधुकर सिंह

मधुकर सिंह ने अपनी कहानी 'लहू पुकारे आदमी ' में जाति-भेद के कारण निम्न जाति पर हो रहे अत्याचारों का उल्लेख किया है । भैरवनाथ और नगीना दोनों पैदल चलकर कॉलेज जाते हैं। गाँव के बाकी सभी लड़के साइकिल से कॉलेज पढ़ने जाते हैं । गाँव के उच्चवर्गीय लोगों को नगीना और भैरवनाथ कि दोस्ती अच्छी नहीं लगती क्योंकि नगीना मुसहर है और भैरवनाथ पण्ड़ित ।

भैरवनाथ के पिता को गाँव वाले कहते हैं कि वह भैरवनाथ को नगीना से मिलने न दें। गाँव के सभी लोग धन इकट्ठा कर भैरवनाथ के लिए भी साइकिल खरीद देते हैं जिससे की वह नगीना के साथ पैदल न जाए । परंतु भैरवनाथ फिर भी नगीना का साथ नहीं छोड़ता। वह उसे रास्ते से साइकिल पर बिठा लेता था। भैरवनाथ और उसके पिता जात-पात को बिल्कुल नहीं मानतें वह तो यहाँ तक कहते हैं कि "खान-पान में जात उठ गयी, तो बाकी क्या रहा ?अब तो शादी-ब्याह में भी कोई नहीं पूछता ।"[26]

भैरवनाथ को` चिन्ता है कि वह यूनिवर्सिटी में फर्स्ट क्लास नहीं ला पायेगा क्योंकि " यूनिवर्सिटी में हेड़ की जाति का लड़का ही फर्स्ट होता है,पढ़कर फर्स्ट

क्लास लाने वाले का जमाना नहीं है।"[27]

भैरवनाथ, नगीना और अजयसिंह गाँव में एक संस्था बनाना चाहते हैं ताकि गाँव के अनपढ़,बेरोजगार एवं निम्न जाति के लोगों को उनके अधिकारों से अवगत किया जा सके। वह अपनी संस्था का नाम 'समाजवादी युवक मंच' रखते हैं। नगीना को महामंत्री बनाया जाता है। इससे ऊँची जाति के लड़के भड़क उठते है, और जब उन्हें यह पता चलता है कि सुकदेव चौधरी नामक हरिजन उनके समक्ष भाषण देगा,तो वह संस्था को छोड़ 'गाँधीवादी युवक मंच'के नाम से नयी संस्था खोल देते हैं।

एक दिन भैरवनाथ और नगीना पर कैलाश और बिपत हमला करते है नगीना ड़रता है कि ऊँची जाति के लड़कों पर कैसे हाथ उठाए, परन्तु बाद में वह उन्हें खूब पिटता है और यह कह कर छोड़ देता है कि"ब्राह्मण को मारने से ब्रह्म हत्या लगेगी।"[28] भैरवनाथ नगीना के इस बदले रूप को देख प्रसन्न होता है। दोनों गाँव पहुँचकर देखते है कि ब्राह्मणों ने मुसहर टोली के सभी घरों को जला दिया है।

जाति भेद-भाव और अत्याचारों से सम्बन्धित मधुकर सिंह की एक और कहानी 'हरिजन सेवक 'है। इसमें हरिजनों पर हो रहे अत्याचारों के साथ आर्थिक शोषण को भी दर्शाया है इसलिए इस कहानी को आगे आर्थिक शोषण से संबन्धित कहानियों के अन्तर्गत लिया है।

'लहू पुकारे आदमी'कहानी में निरूपित चेतना --

वर्षों पहले सामाजिक रूप से भी निम्नजाति का कम शोषण नहीं हुआ है। ऊँची जाति के लोग निम्न जाति के साथ पशुवत व्यवहार करते थे। परन्तु स्वतन्त्रता के बाद सरकार ने इनके उद्धार के लिए कई कानून बनाये। समाज सुधारकों के प्रयत्न,पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति, शिक्षा के प्रचार-प्रसार आदि के कारण आज सामाजिक भेदभाव कम हुए हैं तथा निम्नवर्ग भी अपने अधिकारों के प्रति सचेत हुआ है।

'लहू पुकारे आदमी 'कहानी में उच्चवर्ग, के लोग नगीना मुसहर जैसे निम्नवर्गीय लड़के को पढ़ता हुआ देखकर अंदर ही अंदर कसमकसाने लगते हैं।वे उसे तंग करके रोकने का भरसक प्रयत्न करता है,परंतु नगीना हार नहीं मानता। भैरवनाथ पंड़ित, नगीना को अपना दोस्त बनाकर समाज की इन रूढ़ियों एवं कुरीतियों का विरोध करता है।

भैरवनाथ,नगीना और अजयसिंह गाँव में'समाजवादी युवक मंच'की स्थापना करते हैं। जातिगत भेदभाव को महत्त्व न देते हुए नगीना को महामंत्री बना देते हैं। इससे उच्चवर्ग के लोग क्रोधित होकर एक अलग संस्था की स्थापना करते हैं। नगीना के बढ़ते हुए प्रभाव को देख उच्चवर्गीय ये लोग उस पर हमला करता है। पहले वह मार खाता है

परंतु बाद में उन्हें खूब पीटता है।भैरवनाथ,नगीना के इस रूप को देख प्रसन्न होता है।

लेखक बताना चाहता है कि अब धीरे-धीरे इस वर्ग में चेतना का संचार होने लगा है। वे भी शिक्षा प्राप्त करके नई विचारधारा से अवगत हो रहे हैं । वे अब अपने अधिकारों के प्रति जागरुक होकर संघर्षरत तो हैं ही साथ ही साथ अपनी योग्यता के अनुसार वे सामाजिक कार्यों में अपना योगदान देकर समाज और देश के लिए अपना जीवन उपयोगी बना रहे हैं । लेखक ने निम्नवर्गीय लोगों की मानसिकता में आ रहे बदलाव का प्रभावात्मक निरूपण किया है।

(iv) 'बीच के लोग' - मार्कण्डेय

मार्कण्ड़ेय की कहानी 'बीच के लोग' गॉव में आ रहे सामाजिक बदलावों की ओर संकेत करती है। फऊदी दादा की गाँव में सभी लोग इज्जत करते हैं। कोई भी उनका विरोधी नहीं है। गाँव में नई पीढ़ी के युवान भी हैं,जो बदलाव चाहते हैं। नई पीढ़ी के नवयुवा का प्रतीक है फऊदी का बेटा और मनरा । मनरा लोगों में नई चेतना जगाना शुरु करता है। वह जब अपनी नई लाल झंड़े वाली पार्टी बनाता है तो बुझावन उसे रोकता है। प्रत्युत्तर में मनरा कहता है कि " नया विचार समाज में पहले बुरा लगता ही है।" [29]

ठाकुर हरदयाल की ज़मीन जिसे बुझावन आठ वर्षो से जोत रहा है। नए कानून के अनुसार कानूनी तौर पर अब वह ज़मीन बुझावन की हो गई है। ठाकुर उसे अब गाँव के साहूकार को बेचकर,पैसे बनाना चाहता है। साहूकार पहले तो हाँ कर देता है लेकिन जब देखता है कि बुझावन खेत छोड़ने को तैयार नहीं है तो वह कहता है की पहले तुम कब्जा ले लो, फिर मैं खरीद लूँगा । इस पर ठाकुर रात अंधेरे में बुझावन के खेत पर बीस-पच्चीस आदमीयों के साथ बुझावन की आलू की फ़सल को उखाड़ फेंकता है। अगले दिन वह खेत भी जोतने लग जाता है परंतु दूसरी ओर से मनरा भी हल लेकर खड़ा हो जाता है। फऊदी दादा उसे समझाते हैं परंतु वह एक भी बात नहीं मानता। फऊदी का बेटा भी मनरा का साथ देता है। ठाकुर चला जाता है। फऊदी दादा भी यह कहकर चल देते हैं कि "अब से मोर्चे पर कभी नहीं आएगें ", तब मनरा कहता है "अच्छा हो कि दुनिया को जस-की-तस बनाए रहने वाले लोग अगर हमारा साथ नहीं दे सकते तो बीच से हट जाएँ, नहीं तो सबसे पहले उन्हीं को हटाना होगा, क्योंकि जिस बदलाव के लिए हम रण रोपे हुए हैं,वे उसी को रोके रहना चाहते हैं।"[30]

'बीच के लोग' कहानी में निरूपित चेतना --

ज़मींदारो द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों को 'बीच के लोग' कहानी में देखा जा सकता है। यह ज़मींदार किसानों को उनकी ही जोती-बोई हुई ज़मीन से बेदखल कर इनके साथ पशुता का व्यवहार किया करते थे। लेकिन स्वतन्त्रता के बाद सरकार ने कठोरता के साथ ज़मींदारी प्रथा का उन्मूलन कर, यह कानून बनाया की जो जिस जमीन को जोतता और बोता है वह उसकी होगी । परन्तु पुरानी पीढ़ी के व्यक्ति गाँव के ठाकुरों से डर जमीन बोते अवश्य थे परन्तु अधिकार नहीं जता पाते थे।

एक दिन ठाकुर,जो खेत अब बुझावन का हो चुका है उसे साहूकार को बेचना चाहता है परन्तु साहूकार, ठाकुर से उस पर पहले कब्जा लेने के लिए कहता है। यह देख ठाकुर अपने आदमियों के साथ बुझावन के खेत में जाकर आलू की फसल को निकाल फैंक हल चलाने को कहता है, परन्तु आधुनिक शिक्षित नई पीढ़ी के मनरा और फऊदी का बेटा हल लिए खड़े हो जाते है और जमीन पर बुझावन का हक बताते हैं। पुरानी पीढ़ी के व्यक्ति उन्हें चुप रहने को कहते हैं परन्तु वे डरते नहीं और निर्भिक होकर ठाकुर का मुकाबला करते हैं। आखिरकार ठाकुर को खेत छोड़ कर जाना पड़ता है और नई आधुनिक शिक्षित पीढ़ी की विजय होती है।

वर्षों पहले किसानों को उनकी ज़मीन से बेदखल कर दिया जाता था, लगान भी मनमाना वसूल किया जाता था, बिना पारिश्रमिक दिये बेगार करवाया जाता था परन्तु स्वतन्त्रता के बाद सरकार की सहायता एवं शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कारण किसान अपने अधिकारों को जान गये हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि अब किसान अपना स्वतन्त्र अस्तित्व को जानने लगे हैं । यह सामाजिक चेतना नई शिक्षित पीढ़ी के परिश्रम से ही संभव हो सकी है। गाँव के निम्नवर्गीय एवं शोषित वर्ग में आ रही जागृति नि:संदेह भारत की सामाजिक व्यवस्था को अधिक सम्बल प्रदान करेगी।

(V) 'सर्पदंश' - रामदरश मिश्र

गोकुल, गाँव-प्रधान के खेतों में काम करता है परन्तु उसे न तो मजदूरी दी जाती है और न फसल में से हिस्सा।अपने बच्चों को भूखा देखकर वह रात को मक्के की बालियाँ लेने खेत में जाता है,तभी उसे वहाँ पर सॉप काट लेता है। मृत्यु को सामने देखकर वह खुश होता है कि चलो इस नारकीय जीवन से छुटकारा मिला।गॉव का एक आदमी उसे इस हालत में देख गाँव ले आता है और भवानी बाबा अपने मन्त्रों के द्वारा उसका इलाज प्रारम्भ कर देते हैं।

हरिजनों के इस टोले में ऊँची जाति के लोग भी इकट्ठे हो जाते हैं और कहते हैं , अच्छा हुआ, कि इसे सांप ने काट लिया, यह अवश्य ही वहाँ चोरी

करने गया होगा। इसे जहाँ साँप ने काटा वह तो प्रधान का खेत है। अपने परिवार की याद आते ही गोकुल अन्दर ही अन्दर इस विष से लड़ने लगता है और सुबह तक ठीक हो जाता है। अभी गोकुल सोया ही होता है कि प्रधान का लड़का उसे बुलाने आ जाता है।

गोकुल जब प्रधान के घर पर पहुँचता है तो देखता है कि वहाँ पर काफी भीड़ है। गाँव-प्रधान उस पर चोरी का आरोप लगाता है, तो वह कहता है प्रधान जी खेत आपका है लेकिन फसल मेरी है, यह सुन प्रधान उसे थप्पड़ मार देता है, परन्तु जैसे ही दूसरा थप्पड़ मारने लगता है तो गोकुल उसका हाथ पकड़ कर सबके सामने झटक देता है। यह देख प्रधान और उसके आदमी उसे निर्दयता से मारते हैं। गोकुल मर जाता है । गोकुल की पत्नी पति की अपमृत्यु पर रोने लगती है लेकिन उसका लड़का दूसरे गाँव दौड़कर चला जाता है जिससे की वह अपनी जाति के सभी लोगों को इकट्ठा करके इन सांपो से लड़ाई कर सके। इस प्रकार हरिजनों की नव युवा पीढ़ी अब अपने पूर्वजों की भाँति चुपचाप अत्याचार और अन्याय को नहीं सहती है ।

'सर्पदंश' कहानी में निरूपित चेतना --

गाँव का उच्च वर्ग वर्षों से किसानों का शोषण करता आ रहा है। भूमि जोतने वाले किसानों का भूमि पर कोई अधिकार नहीं रहता था। श्रमिक का अपने श्रम के मूल्य पर जरा भी अधिकार नहीं था । उसके श्रम का शोषण होता था, उसको बिना पारिश्रमिक दिये उससे बेगार लिया जाता था । लेकिन अब श्रमिक वर्ग अपने अधिकारों को जान चुका है। अब उसमें अन्याय के विरूद्ध विद्रोह की भावना जन्म ले रही है। 'सर्पदंश' कहानी इस प्रजातान्त्रित व्यवस्था में भी अवशिष्ट सामंती-शोषण, अत्याचार और हृदयहीनता को तल्खी से उजागर करती है ।

गोकुल अपने बच्चों को भूखा देख रात को मक्के की बालियाँ तोड़ने खेत में जाता है तभी उसे वहाँ साँप काट लेता है। ठीक होने पर गॉव का प्रधान उस पर चोरी का झूठा आरोप लगा उसे मारने लगता है,तो गोकुल हाथ पकड़ लेता है। यह देख उच्चवर्ग उसे इतना मारता है कि वह मर जाता है।यहाँ सर्प से भी अधिक खतरनाक सामंतो के अत्याचार सिद्ध होते है।

लेखक ने यहाँ यह बताया है कि मनुष्य-मनुष्य न रहकर पशु से भी अधिक धातक सिद्ध हो रहा है। " यह उच्चवर्ग सही माने में सर्प से भी भयंकर और खतरनाक है । सर्पदंश से मनुष्य भले ही बच जाए पर समाज के इस विषधरों की मार से कोई भी नहीं बच सकता। गो्कुल की मृत्यु इसका प्रमाण है।" [31]

दूसरी ओर युवा पीढ़ि में नए सांस्कृतिक मूल्यों और चेतना का सृजन

भी हो रहा है। भारतीय समाज की प्राचीन वर्ण-व्यवस्था के मलबे पर नयी मानवतावादी समाजव्यवस्था की नींव ड़ाली जा रही है। नई पीढ़ि के गोकुल का लड़का पिता की मृत्यु पर शोक मनाने नहीं बैठता है और न ही ठाकुर से डरकर मौन रहता है।वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता हैं "जीने के लिए हमें एक होकर साँपों से लड़ाई करनी ही पड़ेगी। यह लड़ाई जितनी जल्दी हो सके शुरू की जानी चाहिए तभी युगों से पीड़ित सामान्य जन चैन की साँस ले सकेंगे और इज्जत लुटने एवं पशुओ के बीच जीने से मुक्ति पा सकेंगे।"[32] आज श्रमिक वर्ग अपने अधिकारों और दायित्वों के प्रति सज़ग हो चुका है । अब वह स्वंय अपने हित-अहित को पहचानने लगा है। गोकुल का लड़का इस बात का प्रतीक है इसलिए वह उच्चवर्ग से बदला लेने के लिए अपने वर्ग के सभी लोगों को इकट्ठा करने के लिए निकल पड़ता है।

(vi) 'उच्चाटन'- फणीश्वरनाथ रेणु

फणीश्वरनाथ रेणु द्वारा लिखित ' उच्चाटन ' कहानी में पूजीपत्तियों द्वारा निम्नवर्ग के लोगों पर किये जाने वाले अत्याचारों को इस कहानी में देखा जा सकता है ।

गाँव के मिसिरजी से कर्जा लेकर बिलसवा झुमकी से शादी करता है। कर्जा चुकाने के उद्देश्य से वह मिसिरजी के यहाँ गाय, भैंस चरानें का कार्य करता है । मिसिरजी का अन्याय इतना बढ़ जाता है कि वह एक दिन उनकी चरवाही छोड़कर रातों-रात पटना भाग जाता है। उसके चले जाने पर मिसिर जी और उसका लड़का उसके परिवार वालों को तंग करना शुरू कर देते हैं ।

पटना पहुॅचकर बिलसवा रिक्शा चलाने का कार्य करता है । ढ़ाई साल के बाद बिलसवा अपने गाँव वापिस लौटता है। वह पटना शहर से दो सौ रूपये कमा कर लाता है। सबसे पहले बिलसवा मिसिरजी का कर्जा चुकाता है । बिलसवा के ठाट-बाट देखकर गाँव के सभी लोग हैरान रह जाते हैं,इतना ही नहीं गाँव के मिसिरजी भी अब उसे रामबिलास बबुआ कह कर बुलाते हैं । गाँव के सारे नौजवान लड़के उसे हमेशा घेरे रहते कि वह उन्हें भी इस बार अपने साथ पटना ले चले और कोई काम दिलवा दें। मिसिरजी का लड़का,रामविलास के यहाँ आकर पूरा दिन ताश खेलता और शराब के पैसे भी खुद ही चुकाता क्योंकि वह भी पटना जाना चाहता है। रामविलास की पत्नी झुमकी की चाल भी अब बदल जाती है ।

रामविलास फिर से पैसा कमाने के लिए पटना जाने वाला है। गाँव के बीस नौजवान भी उसके साथ जाने को तैयार है। गाँव के सभी लोग चिन्तित हैं कि

इन नौजवानों के शहर चले जाने पर हलवाही कौन करेगा ? रामविलास परिवारीक परिस्थिति के कारण शहर जाने के इरादे को छोड़ गाँव में ही रहना पसन्द करता है। गाँव के बुजुर्ग लोगों को जब पता चलता है कि रामबिलास अब शहर न जाकर गाँव में ही रहेगा, तो वे सब अतिप्रसन्न होते है कि गाँव के नौजवान युवक गाँव में रहकर अपनी खेती करेंगे ।

'उच्चाटन' कहानी में निरूपित चेतना --

पूँजीपत्तियों द्वारा निम्न वर्ग के लोगों पर किये जाने वाले अत्याचारों को इस कहानी में देखा जा सकता है।बिलसवा जो कि निर्धन है और अपने विवाह के लिए गाँव के मिसिरजी से कर्ज लेता है। कर्ज का रूपया चुकाने के लिए वह मिसिरजी के यहाँ उनकी भैंसो को चराने का कार्य करता हैं । मिसिरजी उसे अपना दास समझकर उस पर मनमाना अत्याचार करते हैं । एक दिन तंग आकर वह शहर भाग जाता है।

कहानीकार का उद्देश्य समाज में फैली हुई कुरीतियों और बंधी हुई मान्यताओं को कठोरता के साथ उजागर करना रहा है । लेखक बताना चाहता है कि आज समाज पैसे के आधार पर विभाजित है। बिलसवा जब पटना से रूपये कमाकर लाता है तो सबसे पहले वह मिसिरजी का कर्जा अदा करता है। मिसिर जी अब उसे रामविलास कह कर बुलाते हैं।

आज गाँव का युवावर्ग शहरी चमक-दमक में अन्धा हो गया है इसीलिए गाँव के सभी युव-युवक रामविलास को दिन रात घेरे रहते कि वह उन्हें अपने साथ शहर ले चले। यह आज अपने खेतों में मजदूरी न कर शहरों में कोई भी काम करने को तैयार है । लेकिन जब रामविलास शहर जाने के निर्णय को छोड़ देता है तो गाँव के सभी लोग खुश होते हैं कि गाँव का युवा वर्ग गाँव में रहकर ही अपनी ज़मीनों पर काम करेंगे ।

आज गाँव के अधिक्तर युवक शहरी चमक-दमक देख शहर की तरफ आ रहें हैं परन्तु यहाँ आकर उन्हें आवास और बेरोजगारी जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। तब वह न तो वापिस अपने गाँव जा पाते हैं और न ही शहर में रहकर अच्छी आजीविका कमा पाते हैं। जो लोग गॉव वापिस आ जाते हैं वह फिर शहर की तरफ नहीं आते।

सामाजिक जातिय भेद-भाव एवं छुआछूत की समस्या से सम्बन्धित उपर्युक्त छः कहानियों में समस्या के विभिन्न पहलूओं पर विचार किया गया है --

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि देश की प्राचीन सामाजिक व्यवस्था की विकृतियाँ आज के वैज्ञानिक युग में भी वैसी ही बनी हुई हैं । कतिपय कहानियों में गाँव के ज़मींदार,ठाकुर अपने परंपरागत अभिजात्य वर्ग के अभिमान,अपनी सामाजिक श्रेष्ठता, भौतिक सम्पन्नता आदि को महत्व देते हुए निम्नवर्गीय लोगों को अपमानित करते हैं, या उन पर अत्याचार करते हैं ।

'पानी' कहानी में ठाकुर रामदेवबाबू अपने पुत्र के प्राणों की रक्षा करने वाले मंगल और उसके बेटे पर इसलिए बरस पड़ते हैं कि उनकी अभिजात्य सम्मान कि रक्षा इन दोनों बाप-बेटे ने नहीं की । निम्नवर्गीय लोगों के पास मानवता कि जो सम्पत्ति है , वह ठाकुर रामदेवबाबू को नहीं दिखाई दी लेकिन नई शिक्षा पद्धति से उसके बेटे को यह ज्ञान-दृष्टि प्राप्त थी।कहानी के अन्त में छुआछूत की प्राचीन जंजीरों को टूटते हुए दर्शाया गया है। इस प्रकार आधुनिक युग की मानवतावादी विशेषता को प्रतिपादित किया गया है ।

मधुकर सिंह की 'लहू पुकारे आदमी' कहानी में भी छुआछूत की सामाजिक मान्यता के व्यापक स्वरूप को निरूपित किया है । कहानी में नगीना और भैरवनाथ दोनों अलग-अलग जाति के नवयुवा है । दोनों के मैत्री सम्बन्ध को गॉव के रूढ़िवादी अभिजात्य वर्ग स्वीकार नहीं कर पाता है । सामाजिक श्रेष्ठता का यह अहंकार अपने व्यापक प्रभाव को दर्शाता हुआ नये सम्बन्धों में अलगाव पैदा करने का यत्न करता है , लेकिन सफल नहीं हो पाता। दोनों प्रगतिशील युवक जाति-पाति के रूढ़िवादी विचारों की जंजीरों से मुक्त रहकर गाँव के विकास के लिए 'समाजवादी युवक मंच' स्थापना करतें हैं । इस प्रकार जाति-भेद के अंधियारे को दूर करने वाली नई प्रकाशित चेतना से लेखक हमारा परिचय करवाता है ।

'सर्पदंश' कहानी के द्वारा गॉव के श्रमिक मजदूरों की दुखी,पीड़ित. स्थिति का मार्मिक एवं व्यंग्यात्मक चित्रण प्रस्तुत है । कहानी का नायक गोकुल कठिन परिश्रम करके भी अपने बच्चों को दो वक्त का भरपेट भोजन भी नहीं जुटा पाता। भूख से तड़पते बच्चों की पेट की आग बुझाने के लिए रात्रि के अन्धकार में वह मक्के की बालियाँ लेने खेत मे आता है, तभी उसे जहरीला साँप काट लेता है। भाग्यवश वह बच जाता है। लेकिन समाज के ठेकेदार उसके मानव अधिकार की याचना पर मृत्यु का दंड़ देते हैं।इस प्रकार गरीबों पर हो रहे अत्याचार और उनकी दीन-हीन स्थिति का चित्रण किया है।

लेखक ने व्यंग द्वारा समाज के उच्चवर्गीय लोगों के अभिमान युक्त स्वार्थ के ज़हर की तीव्रता दर्शायी है । कहानी के अन्त में गोकुल के पुत्र द्वारा इन सामाजिक नागों के अत्याचार के विरूद्ध निम्न, दलित,शोषित जाति के संगठित स्वरूप

को निरूपित किया गया है ।

'बीच के लोग' कहानी में नई पीढ़ी के युवानों द्वारा भूस्वामियों की सामन्ती मानसिकता, उनके द्वारा गरीबों पर किये जाने वाले अन्याय और अत्याचारों के विरूद्ध संगठित विद्रोह को निरूपित किया है। लेखक प्राचीनं रूढ़िवादी जंजीरों की जकड़न को तोड़ने के लिए नयी पीढ़ी के युवानों की जागृत चेतना को महत्वपूर्ण मानते हैं।

'उच्चाटन' कहानी द्वारा निम्न वर्गीय लोगों की आर्थिक संकट को दूर करने के कतिपय उपायों और प्रयत्नों को वर्णित किया गया है ।

'इज्जत' कहानी में उच्चवर्ग के लोगों की विलासिता और सामाजिक जीवन के प्रति उनके दोहरे मापदंड को वर्णित किया गया है। समाज में नारी के प्रति हेय दृष्टिकोण रखते हुए उसे भोग्या समझा गया है। इनमें ज़मींदार, ठाकुर जैसे समाज के प्रतिष्ठित उच्चकुलीन लोग अपनी विलासिता की पूर्ति के लिए अछूत नारियों की इज्जत के साथ खिलवाड़ करते हैं। इनको भोगते हुए कुलीन लोगों की मर्यादा और मान भंग नहीं होता है। लेकिन संकट की परिस्थितियों में भी कुलीन परिवार की स्त्रियों के प्राणों की रक्षा कोई अछूत नहीं कर सकता है।इस प्रकार उच्चवर्ग के दोहरे मापदंड पर लेखक ने व्यंग्य को दर्शाते हुए, इन रूढ़ियों को तोड़ने का सफल प्रयत्न किया है।

इस प्रकार प्रस्तुत कहानियों में परंपरागत समाज के आभिजात्य वर्ग के लोगों का अहंकार, इस अहंकार को बनाये रखने के लिए गरीब एवं पिछड़े हुए लोगों का अपमान, उनका शोषण एवं उन पर हो रहे अत्याचार आदि का यथार्थ एवं प्रभावशाली चित्रण पाया जाता है। साथ ही सामाजिक अन्याय और अत्याचार के विरूद्ध नई पीढ़ि के नवयुवा लोगों का मानवतावादी स्वर भी सशक्त रूप से गुंजित है जो नये समाज के आगमन के सूचक हैं ।देश की आज़ादी के पचास साल बाद भी गाँव में गरीबों पर उच्चवर्गीय लोगों के अत्याचार शोषण और अपमान का सिलसिला जारी है,जो देश के सामाजिक परिवेश को कलंकित करता है।

ख) नारी के बदलते हुए स्वरूप और उसके जीवन की त्रासदी

पुरूष प्रधान समाज में नारी पर सदियों से पुरूष का प्रभुत्व और अधिकार रहा है। शारीरिक रचना की दृष्टि से पुरूष की तुलना में नारी अधिक कोमल और दुर्बल कही जा सकती हैं। सामाजिक व्यवस्था में संभवत: नारी की इन्हीं विशेषताओं के आधार पर उसके कार्यक्षेत्र को धर की चार दिवारी में सीमित किया गया। शनै:शनै: पुरूष की प्रबल अधिकार भावना और श्रेष्ठता के अहंकार ने नारी के स्वतन्त्र अस्तित्व को कुंठित कर दिया । नारी पुरूष की भोग-वृत्ति को तृप्त करने वाला साधन मात्र रह गई। दिन-प्रतिदिन समाज में नारी की दशा अधिक दयनीय होती गई।समाज में उसकी

स्वतन्त्र अस्मिता का कोई महत्वपूर्ण स्थान न रह गया । वह शारीरिक आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण से पुरूष के आधीन होती गई ।

आधुनिक काल में परिस्थितियों में आये बदलाव, शिक्षा के प्रचार-प्रसार, पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव तथा समाज सुधारकों के प्रयास ने नारियों को जागृत किया। उन्हें अपने अधिकार और अपनी अस्मिता के प्रति सचेत कर दिया। सदियों से नारी के शोषण का आधार उसकी पुरूष परतंत्रता रही है । यही परतंत्रता उसके लिए सबसे बड़ा अभिशाप सिद्ध हुई है लेकिन देश की स्वतंत्रता के बाद सरकार और समाज के प्रबुद्ध सुधारकों के प्रयासों से नारी आर्थिक दृष्टि से सबल हुई उसका आत्मगौरव भी जागा। वह पुरूष के ईशारों पर नाचनेवाली कठपुतली नहीं रह गई । सामाजिक न्याय और आर्थिक दृष्टि से सबल होने पर उसमें एक नई चेतना आई है।आज उसके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी क्षमता और महत्ता सिद्ध कर दी है । आज के इस आधुनिक युग में नारी प्राचीन सामाजिक परम्पराओं, रूढियों और कुरीतियों को चुनौती दे रही है। वह पहले जैसी निरीह और दयनीय नहीं रह गयी है। समकालीन नारी ने पतिव्रता की मान्यताओं को अस्वीकार कर दिया है। अपने विरूद्ध मनमाने अन्यायपूर्ण निर्णय का सामना करते हुए वह प्रतिशोध की शक्तिमता के साथ उठ खड़ी हुई है।लेकिन समाज में अपने अधिकार और अस्मिता की स्थापना का संघर्ष आज भी जारी है।नारी के लिए प्राचीन रूढ परम्पराओं की बेड़ियों को तोड़ना इतना आसान नहीं है। फिर भी भविष्य में नारी इन जंजीरों से मुक्त होकर अपने गौरवमय जीवन की स्वामिनी बन सकेगी ।

नारी जीवन की त्रासदी को उजागर करने वाली कहानियाँ निम्नलिखित हैं-- ' एक औरत एक जिन्दगी ' (रामदरश मिश्र), 'छोटे शहर की शकुन्तला ' (डॉ.पद्मशा) 'तोहमत' (ममता कालिया), 'मैं नारी हूँ' (विष्णुप्रभाकर), 'उपहार' (शिवप्रसाद सिंह), 'एक भटकी हुई मुलाकात' (रामदरश मिश्र), 'एक टुकड़ा धरती'(कमला सिंधवी) ।

(i) 'छोटे शहर की शकुंतला'- डॉ.पद्मशा

'छोटे शहर की शकुंतला' सुस्मिता और विनय के दांपत्य जीवन की कहानी है। दांपत्य जीवन में पति और पत्नी का समान महत्व है। प्रत्येक परिस्थिति में दोनों एक-दूसरे के पूरक या सहायक बनकर रहें,तब ही विवाहित जीवन सफल होता है।

सुस्मिता स्टेट बैंक में एक्जिक्यूटिव ऑफिसर है। पति विनय लेक्चरर है। सुस्मिता एक दिन पति और भाई के लिए शर्टपीस लाती है । यह देखकर विनय

कहता है " सुशा तुम कल अपने बैंक का एकाउण्ट मेरे नाम कर दो , इस प्रकार की तुम्हारी फिजूल खर्ची से तो हम भविष्य के लिए कोई योजना नहीं बना सकेंगे । तुमसे शादी करके मुझे नुकसान ही हुआ है यदि कहीं और शादी करता तो मुझे बहुत कुछ मिलता। "[33]

पति के आर्थिक लोभ और पत्नी के प्रति अनुदारता से सुस्मिता का ह्रदय टूट जाता है । वह घर छोड़कर चली जाती है । धीरे-धीरे दोनों में फासला बढ जाता है।सुस्मिता को आशा थी कि वह एक दिन उसे अपने पास अवश्य ही बुलाएगा। वह एक नन्हा विनय मुझसे माँगेगा।परंतु सुस्मिता की आशा निराशा में परिवर्तित हो जाती है।एक लंबे अरसे के बाद विनय की तरफ से तलाक के लिए वकील की नोटिस आती है। सुस्मिता पति को तलाक देकर अकेले जीवन जीने का फैसला करती है ।

'छोटे शहर की शकुंतला' कहानी में निरूपित चेतना --

दुष्यंत शकुंतला की पौराणिक कथा सूत्र से जुड़ी डॉ.पद्मशा की प्रस्तुत कहानी पौराणिक युग और आधुनिक युग के बीच नारी-व्यकतित्व में आए बदलाव को उजागर करती है।शकुंतला की तरह पति के द्वारा परित्यकत नारी आज निरीह अबला बनकर दयनीय दशा में जीती नहीं है । नारी एक सच्चे साथी की तरह पति के कार्य और उसके उत्तरदायित्व के निर्वाह में हाथ बटाती है। लेकिन आज भी पुरुष,पत्नी की भावनाओं को न समझकर उसे अपनी आवश्यकता की पूर्ति का एक साधन मात्र समझता है ।

सुस्मिता का पति स्वयं शिक्षक होते हुए भी पत्नी के प्रति अनुदार और अमानवीय व्यवहार करता है । पत्नी की कोमल भावनाओं पर अपने स्वार्थी मानसिकता द्वारा व्रजाधात करता है।लेखक ने सुस्मिता के चरित्र द्वारा यह स्पष्ट किया है कि आज की नारी अपने आत्मसम्मान और अपनी भावनाओं की महत्ता को सुरक्षित रखना जानती है। पौराणिक युग की शकुंतला की तरह वह दु:खी, पीड़ित होकर पति के अत्याचार को मौन भाव से सहती नहीं रहेगी । उसने अपने अस्तित्व को समझा, परखा और जाना है । पति की छत्रछाया दूर होने पर भी वह समाज में आत्मनिर्भर होकर जीवन व्यतीत करती है और समाज के लिए यथास्थान उपयोगी बनने का यत्न करती है। " सुस्मिता का यह चरित्र भारतीय परिवेश में उभरने वाली स्वाभिमानी स्वावलंबी स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है। ऐसी स्त्रीयाँ संख्या में कम है परंतु जब तक उनमें इस प्रकार का परिवर्तन नहीं होगा तब तक पुरुष की मानसिकता में परिवर्तन नहीं हो सकेगा।"[34]

आज शिक्षित नारी पुरुष की दासी नहीं रह गई है।वह अपने अधिकारों को समझती है । शिक्षा के कारण वह जान गई है कि उसका भी अपने परिवार के प्रति उत्तरदायित्व है। वह आज प्राचीन परम्परा से चली आ रही रूढीयों को चुनौती दे रही है जिसमें कि विवाह के बाद पत्नी ससुराल की हो जाती थी। परंतु आज यह मान्यताऍ खंड़ित हो रही हैं।नारी आज विवाह के बाद परिवार की आर्थिक तंगी को देख सहायता भी करती है। लेखक ने समाज की इस बदलती दिशा और नारी चेतना को उद्घाटित किया है ।

(ii) 'मैं नारी हूँ' - विष्णु प्रभाकर

'मैं नारी हूँ' कहानी में रंजना के उच्च व्यक्तित्व का चरित्र चित्रण किया गया है। रंजना की शादी ड़ॉ.विश्वरंजन मुखर्जी से होती है। वह रंजना को बहुत प्यार करते हैं ।वह जहॉ पर भी जाते रंजना को अपने साथ ले जाते, यहाँ तक की वह व्यवसायिक कार्य हेतू जाते तो भी उसे अपने साथ लेते । एक दिन रंजना असामाजिक तत्वों का शिकार हो जाती है ।

अहल्या विद्यापीठ की संस्थापिका, ड़ॉ. विश्वरंजन मुखर्जी को पत्र लिखकर सूचित करती है कि उनकी पत्नी रंजना उनके यहॉ पर है,परंतु मुखर्जी साहब जवाब में लिखते हैं कि "रंजना का अब हमारे परिवार में कोई स्थान नहीं है।वह स्वतंत्र है जो चाहे करे, जहाँ चाहे रहे । "[35] यह सब सुन रंजना को धक्का लगता है । वह अहल्या विधापीठ की प्राचार्या से प्रेरित होकर एम.ए.करती है और प्रथम श्रेणी से पास भी होती है । इतना ही नहीं वह अपने जीवन में घटित घटना को एकांकी के रूप में लिखती है । उसकी यह एकांकी ' साधना ' नामक पत्रिका में छपती है । रंजना की कार्यकुशलता, परिश्रम और योग्यता के आधार पर उसे कालिंदी कॉलेज में प्राध्यापिका की नौकरी मिल जाती है ।

ड़ॉ.विश्वरंजन मुखर्जी अब रंजना से मिलना चाहते हैं और इसी कारण कई पत्र भी लिखते हैं । परंतु रंजना उनके पत्रों को फाड़ डालती है । एक दिन वह अचानक रंजना से मिलने उसके ऑफिस में आ जाते हैं , और कहते हैं " मैं अंदर आ सकता हूँ " के जवाब में रंजना कहती है " नहीं आप नहीं आ सकते, जिस रंजना को आप खोजने आए हैं वह मर चुकी है। मैं नारी हूँ और नारी अब अपने आत्मसम्मान की रक्षा करना जानती है। "[36]

'मैं नारी हूँ' कहानी में निरूपित चेतना --

प्रस्तुत कहानी में प्रभाकर ने नारी के अदृष्ट, प्रखर, कर्मठ व्यक्तित्व को उभारा है। "[37]प्रतिकुल परिस्थितियों में नारी अपनी आत्म-शक्ति को जागृत करके समाज की हर मुसीबतों का सामना बड़ी दृढता, कुशलता और निर्भयता से करती है ।

कहानी की नायिका रंजना शारीरिक और मानसिक रूप से एक दुर्घटना का शिकार हो जाती है। ड़ॉ.विश्वरंजन मुखर्जी अपनी निर्दोष पत्नी को प्रेम और सांत्वना प्रदान करने के स्थान पर इस आकस्मिक घटना के लिए मानो दोषित ठहराकर उसे दंडित करते हो। रंजना का त्याग करके पति ने अपने सामाजिक-सम्मान की सुरक्षा का अहमयुक्त भ्रम भले ही पाल लिया हो लेकिन दु:खी पत्नी पर व्रजघात करके उसने नारी -सम्मान को ठेस पहुँचायी थी।रंजना एक तरफ असामाजिक तत्वो द्वारा प्राप्त आघात को सह रही थी तो दूसरी ओर अपने ही पति के कठोर-निर्मम व्यवहार के व्रजाघात को । चारों ओर से पीड़ित, व्यथित रंजना जीवन की हार स्वीकार नहीं करती है । वह अपना अभ्यास आगे बढ़ाकर अपनी योग्यता को निखारती है।कांलिदी कॉलेज में एक सम्मानीय प्राध्यापिका के रूप में कार्यरत होने के साथ-साथ एक सफल लेखिका के रूप में भी रंजना अपने व्यक्तित्व को उभारती है। कुछ वर्षो के पश्चात् ड़ॉ० विश्वरंजन पुन: एक सम्मानीय नारी को पत्नी के रूप में स्वीकार करने आते हैं, तब रंजना अपने आत्म-गौरव की रक्षा करते हुए पति के प्रस्ताव को ठुकरा देती है ।

प्रभाकरजी ने नारी के सम्बन्ध में समाज की मान्यता को बदलने का यत्न किया है । आज की नारी अबला , आँसूओं को बहाकर पुरूष और समाज के अत्याचारों को मौनभाव से सहने वाली दयनीय, निरीह जीव नहीं है । वह सशक्त है, आत्म-निर्भर है और अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व के प्रति जागरूक हैं। समाज आज नारी का महत्व, उनकी शक्ति, उनके आत्मसम्मान की पहचान कर ले, तो विकास की दिशा में उसे हर कदम पर सफलता और गौरव की प्राप्ति होगी ।

(iii) 'तोहमत'- ममता कालिया

ममता कालिया ने अपनी 'तोहमत' कहानी में नयी पीढ़ी की शिक्षित किशोरियों में पनपती स्वतंन्त्र मानसिकता एंव निर्भिक वैचारिकता को दिखाया है।"[38] सुधा, आशा की सहेली है और पड़ोस में रहती है । दोनों में इतनी दोस्ती है कि तीसरे का साथ बरदाश्त नहीं कर पाती। कॉलेज के प्रोफेसर हमेशा दोनों की सराहना करते।

आशा और सुधा ने यह तय किया कि एम.ए.की परीक्षा समाप्त होने

के बाद वे न तो शादी करेंगी,और न ही घर में बैठी रहेगी बल्कि आई.ए.एस की तैयारी करेंगी । एक दिन दोनों घूमते-घूमते काफी दूर निकल गईं,अन्धेरा हो गया परन्तु उन्हें समय का ध्यान ही नहीं हुआ । उन्होनें देखा कि एक तान्त्रिक साधु निर्वस्त्र पूजा कर रहा है । दोनों को देखते ही वह क्रोध से चिल्लाया।आशा और सुधा ने न आव देखा न ताव दोनों भागी, इस भाग-दौड़ में दोनो के वस्त्र भी इधर-उधर से फट गए। उन्हें इस हालत में देख घर वाले डर गये दोनों के बाहर जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। कॉलेज खुलने पर जब दोनों कॉलेज गईं तो लड़कों को मौका मिल गया छेड़-छाड करने का।लड़कों ने सोचा कि भयभीत यह दोनों अब क्या बोल सकती हैं।सुधा ने आगे बढ़कर एक लड़के को थप्पड मार दिया। यह देखकर कई लड़के उसकी मदद के लिए आगे आए।आशा और सुधा की मदद के लिए भी कई लड़कियाँ आगे आ गईं।लड़कियों की उत्तेजना,आक्रोश और आक्रमकता देखकर लड़के भाग गये ।

'तोहमत' कहानी में निरूपित चेतना --

'तोहमत' कहानी आधुनिक युग के सामाजिक बदलाव को दृष्टिगत करवाने वाली कहानी है । विशेष कर इसमें आज की युवा नारियों के निर्भिक व्यक्तित्व, जीवन विकास के लिए उन्नत सपने और उन सपनों को पूरा करने में अवरोधक तत्वों पर विजय पाने की क्षमता को लेखिका ने बड़ी खूबी से उभारा है ।

सुधा और आशा कॉलेज के स्नात्तकोत्तर अभ्यास समाप्त करके आई.ए.एस. जैसे कठिन अभ्यास के लिए कृतसंकल्प हैं । वे उसकी पूर्व तैयारियाँ भी करने लगी हैं । इसी बीच उनकी निर्भिक मानसिकता को झकझोरने वाली एक घटना घटती है । रूढ़िवादी मान्यता रखनेवाले परिवार के लोग उनकी सच्चाई को महत्व न देकर उनके कलंकित चरित्रिक की आशंका रखते हुए उन पर पाबन्दियाँ लगा देते हैं।

ऐसे मानसिक तनाव और संघर्ष के बीच, बिना किसी अन्य की सहायता के, दोनों सहेलियाँ अपना आत्मबल का सम्बल लेकर और परस्पर की घनिष्ट मित्रता के सहारे अभ्यास जारी रखतीं हैं । यहाँ कॉलेज में भी कलुषित मानसिकता रखनेवाले लड़के उन्हें भयभीत और निर्बल समझकर छेड़-छाड़ करने की कायर पौरूषता दिखाने का यत्न करते हैं। लड़कों के द्वारा जब उनका मज़ाक उड़ाया जाने लगा तो आगे बढ़कर एक लड़के को थप्पड मारकर अपने आत्म-सम्मान और निर्भिक व्यक्तित्व का परिचय देती हैं । इस प्रकार आज की युवा नारी, पुरूष और समाज दोनों का बड़ी बहादुरी से सामना कर रही है ।

(iv) 'उपहार' - शिवप्रसाद सिंह

'उपहार'कहानी में शिवप्रसाद सिंह ने गुलाबी के चरित्र को उद्घाटित किया है। गुलाबी जो विधवा है। ठाकुर के यहाँ काम करते हुए गर्व अनुभव करती है कि ठाकुर के होते हुए उसकी तरफ कोई देख नहीं सकता। ठाकुर का गाँव में प्रभुत्व है। गाँव में मेला लगने पर ठाकुर गुलाबी को कुछ माँगने के लिए कहते हैं परन्तु वह चुप रहती है ।

ठाकुर के यहाँ काम करने वाले बच्चन को वह चाहती है । ठाकुर को जब इस बात का पता चलता है तो वह बच्चन पर चोरी का झूठा आरोप लगा नौकरी से तो निकालता ही हैं साथ ही उसे बहुत बुरी तरह से पिटता भी हैं क्योंकि ठाकुर की नजर भी गुलाबी पर है । बच्चन मार खाने के बाद मन ही मन सोचता है कि उसकी माँ ने कई वर्षों से ठाकुर के यहाँ काम किया, माँ कि मृत्यु के बाद मैंने ठाकुर की सेवा में कोई कमी नहीं होने दी और आज मुझ पर चोरी का झूठा आरोप लगा नौकरी से निकाल दिया ।

गुलाबी को जब पता चलता है तो वह बच्चन को गाँव छोड़कर कहीं दूर चलने को कहती है अभी दोनों बातें कर ही रहे होते हैं कि ठाकुर गुलाबी को बुलाता है । तब गुलाबी उत्तेजित होकर कहती है "तुमसे मतलब, 'चले जाओ यहाँ से, हम तुम्हारे नौकर नहीं हैं । " [39]गुलाबी अपनी झोपड़ी में आती है और ठाकुर द्वारा उपहार दिया हुआ बण्डल, जिस में साड़ी है ,उसे ठाकुर के मुँह पर दे मारती हुई कहती है "यह है तुम्हारी साडी, यह उपहार अपनी घरवाली को दे देना ।" [40] ठाकुर को विश्वास ही नहीं होता कि यह वही गुलाबी है या और कोई ।

'उपहार'कहानी में निरूपित चेतना --

शिवप्रसादजी की 'उपहार' कहानी अनेक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण कही जा सकती है।इसमें नारी के व्यक्तित्व को कतिपय महत्वपूर्ण पहलूओं को उजागर किया गया है। साथ ही पुरूष की तुलना में नारी-चरित्र के अनेक गुणों को प्रकाशित किया है जो समाज के सांस्कृतिक विकास के लिए परम आवश्यक है ।

कहानी की कथा, गुलाबी नामक एक विधवा नारी के उज्जवल व्यक्तित्व और उसके आश्रयदाता , एवं समाज के सम्मानीय कहे जाने वाले ठाकुर के कामुक और लम्पट व्यक्तित्व को उद्घाटित करती है। गुलाबी विधवा स्त्री है लेकिन वह दूसरों पर निर्भर न रहकर, स्वंय ठाकुर के यहाँ काम करके अपना जीवन निर्वाह करती है। ठाकुर का गाँव में प्रभाव है अत: यहाँ काम करते हुए समाज की बुरी नजरों से वह अपने आपको सुरक्षित अनुभव करती है । गुलाबी, ठाकुर के एक पुराने और सेवाभावी

नौकर बच्चन से प्यार करती है । दूसरी ओर ठाकुर गुलाबी की निराधार स्थिति का लाभ उठाने की कामना रखता है। अत: समय-समय पर वह गुलाबी को उपहार देकर रिझाता है । जिस दिन ठाकुर को यह पता चला कि गुलाबी बच्चन से प्यार करती है, उसी दिन से बच्चन,ठाकुर को काँटे की तरह खटकने लगा।उन्होंने बच्चन और उसकी माँ की सेवा का ध्यान न रखते हुए, झूठा चोरी का इल्जाम लगाकर बच्चन को नौकरी से निकाल दिया ।

ठाकुर जैसे समाज के प्रतिष्ठित लोगों के ऐसे हीन और मानवता रहित कार्य समाज के लिए शर्मजनक बात है। गुलाबी,बच्चन के साथ गाँव से दूर जाने का निर्णय करती है। वह ठाकुर के प्रति अपना रोष प्रकट करते हुए ठाकुर के उपहार को ठुकरा देती है ।

इस प्रकार एक नारी चरित्र के निश्छल प्रेम, उसका समर्पण,उसकी सेवाभावना और ठाकुर को उपहार लौटाने में उसके निस्वार्थ और निर्भिक व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। एक निराधार, निराश्रित, अबला नारी का यह साहस किसी भी वीर पुरूष की बराबरी करने में समर्थ कहा जा सकता है ।

(V) 'एक भटकी हुई मुलाकात'- रामदरश मिश्र

' एक भटकी हुई मुलाकात ' कहानी में रामदरश मिश्र जी ने आधुनिक शिक्षित नारी को हमारे सामने प्रस्तुत किया है । अंजना रेलगाड़ी के जिस डिब्बे में बैठ यात्रा कर रही है उसमें एक महिला और उसका बेटा भी बैठे हुए हैं। अंजना को याद आता है कि यदि उसका सुधांशु से तलाक न हुआ होता तो शायद उसका बेटा मनोज भी इतनी ही उमर का होता । मनोज जब दो साल का था तभी तलाक की नौबत आई थी । अदालत ने फैसला दिया था कि मनोज, सुधाशुं का है। सुधांशु जब तक चाहे उसे अंजना के पास पालने-पोषने के लिए डेढ़ सौ रूपये हर महिना अंजना को देता रहेगा जब तक कि वह दूसरा विवाह नहीं कर लेती ।

अंजना ने इसे अपना अपमान ही समझा। उसने सोचा जब सुधाशुं का कुछ भी उसका नहीं रहा तो उसके रूपये क्यों लूँ परन्तु मनोज के लिए ही उसने सुधाशुं के रूपये लिए । पॉच वर्षों के बाद जब सुधाशुं, मनोज को लेने आता है तब अंजना सारा अभिमान छोड़कर अनुनय पर उतर आई, "सुधाशुं इतने क्रूर मत बनो। माना कि यह कानूनन तुम्हारा बेटा है, तुम्हारा रहेगा । लेकिन मुझे इसकी सेवा करके पाल-पोष लेने दो। स्वावलम्बी होगा तो तुम्हारे पास भेज दूँगी । आखिर मैं भी तो कुछ

हूँ।"[41] परंतु सुधाशुं कहता है कि "तुम इसकी कोई नहीं हो केवल पैदा करने की मशीन हो ।" [42] यह सुन अंजना को गुस्सा आ जाता है वह मनोज को ले जाने देती है लेकिन सुधाशुं के दर्प के आगे झुकी नहीं । इतना ही नहीं अंजना ने सुधाशुं के भेजे हुए ड़ेढ सौ रूपये भी लौटा दिये फिर कभी नहीं स्वीकार किये ।

रेलगाड़ी के झटके से जैसे ही उसकी नींद टूटती है तो देखती है सुधाशुं उन दोनो के साथ बैठा है। वह औरत सुधाशुं की नई पत्नी और बेटा मनोज है। स्टेशन आने पर अंजना अपने बेटे मनोज के लिए पैक्ट छोड़कर उतर जाती है ।

'एक भटकी हुई मुलाकात'कहानी में निरूपित चेतना --

भारतीय समाज में विवाह के पश्चात् नारी के जीवन के निर्वाह का समस्त उत्तरदायित्व जीवनभर उसका पति उठाता है। यही कारण है की पति की मृत्यु के पश्चात् विधवा नारी की स्थिति अत्यंत दयनीय हो जाती है । पुरुष प्रधान समाज में पति अपने स्वार्थ और लोभवश कठोर बनकर पत्नी को संसार-सागर में बीच मझधार छोड़ देता है। पति की कठोरता का शिकार बनी हुई एक नारी की संवेदना उसके तड़पते हुए मातृत्व और उसके जीवन-संघर्ष का यर्थाथ चित्रण प्रस्तुत कहानी में वर्णित है।

कहानी की नायिका अंजना आधुनिक युग की एक शिक्षित नारी है। विवाहित जीवन में पति की सेवा करके अपने पतिव्रता धर्म का वह पालन करती थी। लेकिन पति कठोर होकर कानूनी तौंर पर पत्नी से तलाक लेकर दूसरी शादी करता है।पति की कठोरता का यह सशक्त प्रमाण है कि अंजना को अपने पुत्र मनोज सेअलग करके उसके मातृत्व को तड़पने के लिए अकेला छोड़ देता है। मनोज की पाँच वर्ष की आयु तक ही न्यायालय ने अंजना को बेटे की परवरिश की इजाजत दी थी । जिस दिन सुधांशु बेटे को लेने के लिए आता है उस दिन अंजना ने कुछ और समय तक बेटे को अपने साथ रखने की विनंती की। लेकिन सुधांशु ने बडी निर्दयता से बेटे को छीनते हुए कहा की तुम उसकी कोई नहीं हो, तुम पैदा करनेवाली मशीन हो। नारी के मातृत्व का यह अपमान अंजना सह नहीं पायी। उसने अपनी कोमल-भावना पर पत्थर रखकर पिता और पुत्र से सारे संबंध तोड़ लिए। आत्म-सम्मान के साथ स्वयं ही नौकरी करके अपना जीवन निर्वाह करती है। काफी वर्षों के बाद रेलगाड़ी में यात्रा करते हुए अंजना को बेटे मनोज के दर्शन हुए । उसका मातृत्व पुन: करवट लेकर जागृत हुआ। अंजना फिर भी मौन रहकर बेटे के लिए एक उपहार छोड़ कर स्टेशन पर उतर गई।

इस प्रकार मिश्रजी ने आधुनिक नारी की कोमल-भावनाएँ, उसकी ममता, उसकी सम्वेदना,पति और समाज के निर्दयी व्यवहार से व्यथित हृदय की पीड़ा तथा आत्म-सम्मान की रक्षा करते हुए जीवन-संघर्ष में जूझती नारी की वीरता का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।भारतीय नारी के आत्म-गौरव को निरूपित करके लेखक ने देश की सामाजिक प्रतिष्ठा को उजागर किया है।

(vi) 'एक टुकडा धरती' - कमला सिंघवी

प्रस्तुत कहानी एक अशिक्षित,दुखी और गरीब नारी के जीवन संघर्ष और उसके अटूट मनोबल की कहानी हैं।

शकुन्तला बचपन से ही स्नेह एंव प्यार की भूखी रही क्योंकि जब वह छोटी सी ही थी कि उसके माँ-बाप का स्वर्गवास हो गया । चाचा-चाची ने उसे पालपोष कर बड़ा किया । चाची ने उस पर बड़े अत्याचार भी किये । शादी होने पर शकुन्तला ने सोचा की अब वह आराम से जीवन व्यतीत करेगी। परन्तु दहेज न लाने के कारण ससुराल में उसे तंग किया जाने लगा। बात-बात पर उसे ताने दिये जाने लगे, जल्दी ही शकुन्तला पाँच बच्चो की माँ बन गयी।

पति को जुए एंव शराब की लत थी,इसी कारण एक दिन वह अपनी दुकान भी जुए में हार जाता है। दुकान की हार को शकुन्तला का पति सहन नहीं कर पाता और आत्महत्या कर लेता है। पुत्र के आत्महत्या के वियोग में माँ भी कुछ ही दिनों में स्वर्ग सिधार जाती है । पति और सास की मृत्यु के बाद शकुन्तला कुछ दिनों तक शोक में डूबी रहती है। परन्तु बच्चों की जिम्मेदारी और उनके भविष्य को ध्यान में रखती हुई मेहनत, मजदूरी और छोटा-मोटा कामकाज करके बच्चों का पालन-पोषण करती है। शकुंतला लेखिका से कहती है,"मुझे गर्व है कि मैंने अपने पैरों के लिए अपने आप एक टुकड़ा धरती ढूंढ़ ली है जहाँ मैं अपने बच्चों के साथ खड़ी हो सकती हूँ।"[43]

इस प्रकार शकुन्तला अकेली, असहाय होते हुए भी अपनी कड़ी मेहनत और परिश्रम के बल पर अपने बच्चों का आश्रयस्थान बनी रहती है।

'एक टुकडा धरती 'कहानी में निरूपित चेतना --

' एक टुकडा धरती 'कहानी में कमला सिंघवी जी ने नारी की दयनीय स्थिति को और प्रतिकूल परिस्थितियों में अपने अदम्य शक्ति से जीवन संघर्ष से जूझते हुए चित्रित किया गया है। आज भी पुरूष की तुलना में नारी के हिस्से में पारिवारिक उत्तरदायित्व के निर्वाह का कठिन बोझ अधिक उठाना पड़ता है।

प्रस्तुत कहानी की नायिका शकुन्तला जो बचपन से ही प्यार, स्नेह और इज्जत की भूखी रही, उसे विवाह के बाद भी सुसराल में सुख शान्ति नहीं प्राप्त होती है।दहेज के अभाव के कारण उसका पति और सास उसे आये दिन ताने देते हुए कठोर वचनों से प्रताड़ित करते हैं।

समाज में पुरूष प्रमाद,आलस्य या लोभवश कम परिश्रम करके अधिक से अधिक धन-प्राप्ति की इच्छा रखता है। आर्थिक संकट की स्थिति में भी जुए शराब की बुरी संगत कर लेता है। धीरे-धीरे जुए में दुकान हार जाता है। परिवार के निर्वाह का कोई साधन उपलब्ध न रहने पर कमजोर इन्सान की तरह आत्महत्या कर लेता है। पुत्र वियोग में माँ की भी मृत्यु हो जाती है। अत: जीवन और परिवार का समस्त बोझ शकुन्तला के कन्धों पर आन पड़ता है। शकुन्तला अकेले निर्भिक होकर अपने बच्चों का पालन-पोषण मेहनत और मजदूरी करके करती है ।

शकुन्तला किसी के आगे हाथ नहीं फैलाती है,बल्कि मेहनत,मज़दूरी करके अपने बच्चों का पालन-पोषण करती है । लेखिका बताना चाहती है कि आज भी नारी अपने सामाजिक जीवन में अत्यन्त दीन और दु:खी है। फिर भी परिवार के उत्तरदायित्व का निर्वाह करने में पुरूष की तुलना में अधिक सक्षम,सक्रिय और समर्पित है। जीवन-संघर्ष में पुरूष पलायनवादी बन जाता हैं लेकिन स्त्री मृत्यु पर्यन्त अकेले भी जूझती है। 'अशिक्षित स्त्री भी पति की मृत्यु के बाद उदास और निराश न होकर अपने पैरों पर खड़ी हो सकती है। आधुनिक युग की भारतीय नारी का प्रतिनिधित्व शकुन्तला करती है।"[44]

लेखिका ने शकुन्तला के चरित्र के माध्यम से नारी के तप,समर्पण,संयम और जीवन-संघर्ष में जूझने की अदम्य शक्ति का परिचय दिया है। आधुनिक युग की नारी देश के सामाजिक-जीवन को सुदृढ बनाने वाला महत्त्वपूर्ण अंग सिद्ध हो रही है।

(vii) 'एक औरत एक जिन्दगी'- रामदरश मिश्र

'एक औरत एक जिन्दगी 'की नायिका भवानी, ब्राह्मण कुल की कुलवधू है। अपने पति नरेश की मृत्यु के बाद विषम परिस्थितियों में भी भवानी टूटती नहीं है बल्कि उन सभी परिस्थितियों का डटकर मुकाबला करती है।

भवानी के पति नरेश का स्वर्गवास हो गया है लेकिन वह हिम्मत नहीं हारती। बल्कि तेरहीं होते ही वह घर से खेतों की ओर निकल पड़ती है। गाँव की औरतें यह देख उसे पूजा-पाठ में मन लगाने लिए कहती हैं तब भवानी कहती है "मैं पूजा-पाठ में मन लगाऊँ और गाँव वाले मेरी खेती-बारी में मन लगावें और एक दिन पूजा से जागकर पाँऊ कि मेरे सारे खेत पट्टीदारों के नाम हो गये हैं। "[45]

खेत में फसल लगाने का जब समय आया तो भवानी सभी के पास

मदद माँगने के लिए गई परन्तु किसी ने भी उसकी मदद नहीं की, मौके का फायदा उठाकर गाँव के पूंजीपति धनपतिया ने बिना कुछ लिए भवानी के खेतों को बो दिया। भवानी ने अपने खेतों की खूब सेवा की,पानी के न होने पर उसने घडों से भरकर खेतों को पानी दिया। ऐसा लगता है मानो वह सारे गाँव को चुनौती दे रही हो।

पूंजीपति धनपतिया एक दिन भवानी के घर पहुँचकर उसे अपनी वासना का शिकार बनाना चाहता है।परंतु भवानी उसे अपमानित करके घर से निकाल देती है। अपने अपमान का बदला लेने के लिए वह भवानी की फसल में अपना आधा हक माँगता है और अपने हलवाहों को खेतो में से आँधा ड़ाँठ उठा लेने को कहता है। तब भवानी हाथ में गंडासा लिए तन जाती है और कहती है "जिस किसी ने ड़ाँठ पर हाथ लगाया उसे बाल दूंगी। यह ड़ाँठ हमारे खून-पसीने से सिंचा है ।"[46] धनपतिया भवानी के खेतों में आग लगा देता है। भवानी आग देख कर उसके खेतों की ओर दौड़ती है परन्तु गॉव वाले उसे पकड़ लेते हैं ।

'एक औरत एक जिन्दगी' कहानी में निरूपित चेतना --

भारत की सामाजिक व्यवस्था का उदात्त रूप समय-समय पर परिवर्तित होकर दूषित होता गया। देश की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक आदि परिस्थितियों के परिणामस्वरूप समाज के नीति-नियम, विशेष करके नारी के लिए अति संकीर्ण होते गये। परिणामस्वरूप नारी-जीवन के विकास की दिशाएँ अवरूद्ध होती गईं । नारी पुरूष और समाज के अत्याचार, शोषण, अधिकार भावना की जकड़न आदि से पीड़ित,व्यथित और दयनीय दशा को प्राप्त हुई।नारी की सामाजिक दुर्दशा को देखकर ही आधुनिक काल में राजा राममोहन राय, गाँधीजी, दयानन्द सरस्वती जैसे राष्ट्रीय नेताओं ने राष्ट्र के हितों में भी नारी-जीवन को ऊपर उठाने का यत्न किया। उनके सुधारवादी आन्दोलन और सतत परिश्रम के परिणामस्वरूप कतिपय सामाजिक कड़े बन्धन शिथिल हुए। नारी को मुक्त साँस लेने का अवकाश प्राप्त हुआ। आज नारी ने अपना जो सामाजिक स्थान या मुकाम बनाया है, इन में नारी की शक्ति का भी महत्वपूर्ण योगदान है ।

रामदरश मिश्रजी ने ऐसी ही नारी शक्ति का परिचय देने वाली एक सुन्दर कहानी यहॉ प्रस्तुत की है । आज की शिक्षित नारी , परिवार और समाज के अवरोधों का सामना करते हुए अपने जीवन का उत्थान करती है । नगर- जीवन का परिवेश नारी की आन्तरिक शक्ति और साहस को जागृत करने में सहायक सिद्ध होता है। लेकिन आज भी ग्रामीण जीवन में सामाजिक मान्यताओं , परम्पराओं , रूढ़िवादी

नीति-नियमों के बन्धन इतने कड़े हैं कि किसी स्त्री को प्रतिकूल परिस्थितियों में आत्म-निर्भर होकर अपना जीवन-यापन करना अत्यंत कठिन है। लेखक प्रस्तुत कहानी में ब्राह्मण कुल की विधवा नारी भवानी के चरित्रिक विशेषताओं को उद्घाटित करके आधुनिक नारी के आत्मगौरव, उसकी हिम्मत, उसके साहस और सम्मानीय व्यक्तित्व को उदघाटित करते हैं ।

कहानी की नायिका एक धर्म-प्रेमी परिवार की विधवा है। धार्मिक संस्कार रहते हुए भी लोगों की सलाह के अनुसार वह ईश्वर-भजन में अपना शेष-जीवन व्यतीत न करके अपने भौतिक जीवन के निर्वाह का एक कठीन मार्ग अपनाती है।अपने खेतों में स्वयं कठिन परिश्रम करती है। पूंजीपति धनपतिया जैसे गाँव के प्रतिष्ठित सेठ के प्रलोभन को ठुकरा देती है। इतना ही नहीं अपितु धनपतिया के प्रत्येक अत्याचारों का बड़े साहस के साथ सामना करती है।

इस प्रकार प्रस्तुत कहानी में लेखक ने आज की भारतीय नारी की शक्ति, उसकी समझ,उसकी सम्वेदना और जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करने की उसकी साहसिक शक्ति का परिचय दिया है। पुरूष सत्ता जहाँ गाँव के यथार्थ से टूटकर, टकराकर बिखर रही है वहाँ एक नारी शक्ति उससे किस उल्लास के साथ जुड़ रही है। इसके भी तटस्थ दर्शन हैं।[47]

नारी-जीवन की त्रासदी और आधुनिक नारी के बदलते हुए स्वरूप से संबंधित उपर्युक्त सात कहानियों के परिचयात्मक विवरण तथा उनमें निरूपित चेतना के अध्ययन से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं :--

'छोटे शहर की शकुन्तला ' 'मैं नारी हूँ ' तथा 'एक भटकी हुई मुलाकात 'कहानियों में सहृदय नारियों की कोमल भावनाओं पर उनके पति द्वारा ही ब्रजाघात होता है । सुस्मिता का पति आर्थिक लोभ से पीड़ित होकर पत्नी की संवेदना को कुचल देता है।'मैं नारी हूँ'की नायिका रंजना एक आकस्मिक दुर्घटना का शिकार होकर दु:खी और पीड़ित है उसी समय उसका ड़ॉक्टर पति अपने सामाजिक सम्मान की रक्षा के लिए पत्नी को निष्ठुरता से ठुकरा देता है। ' एक भटकी हुई मुलाकात' में अंजना का पति सुधांशु, बिना किसी अपराध के पत्नी को कानूनी तलाक देता है । पति के अत्याचार की चरम-सीमा तब दिखाई देती है जब अंजना से उसका एक मात्र पुत्र मनोज को भी बड़ी निष्ठुरता से छीन लिया जाता है । अंजना के कोमल मातृहृदय पर सुधाशुं , अपने कठोर और निर्मम शब्दों द्वारा ब्रजाघात करता है। अंजना भी अपने आत्म-सम्मान के लिए हृदय पर पत्थर रखकर पति-पुत्र से दूर एकाकी

जीवन व्यतीत करती है ।

तीनों कहानियों की नायिका अपने पति से अलग होकर एक भावात्मक सहारे से वंचित हो जाती हैं। फिर भी ये तीनों निराश, उदास और परवश नहीं रहतीं। वे अपने आत्म-सम्मान की रक्षा करते हुए आत्म निर्भरता के साथ जीवन यापन करती हैं।आधुनिक नारी अपनी भावात्मक संवेदना के कारण कमजोर नहीं है।

' उपहार ' एवं ' एक औरत एक जिंदगी ' जैसी कहानियों में कहानीकार अशिक्षित,निम्नवर्गीय विधवा नारियों के उज्जवल चरित्र को अंकित करते हैं। 'उपहार 'की नायिका गुलाबी, ठाकुर के अन्याय और उसकी लंपट मनोकामना से अत्यन्त रूष्ट होती है। भौतिक जीवन की सुख-सुविधाओं का स्वार्थ न रखते हुए ठाकुर के अमानुषी अत्याचार के विरोध में उसकी नौकरी छोड़ देती है। इसी प्रकार ' एक औरत एक जिंदगी 'कहानी में भी नायिका भवानी को पूंजीपती धनपतिया पहले मदद की आड़ में, फिर ड़रा-धमकाकर एवं अत्याचारों से भयभीत करके भी अपनी लोलुप वासना का शिकार बनाना चाहता है । लेकिन भवानी अकेले ही इन सभी मुसीबतों का सामना करती है। इस प्रकार आज की भारतीय नारी चाहे शिक्षित हो या अशिक्षित, शहरी हो या ग्रामीण जीवन से संबंधित,अपने आत्म-सम्मान और आत्म-गौरव की रक्षा अकेले ही स्वयं करती है ।

'तोहमत ' कहानी में आशा और सुधा जैसी नवयुवा-युवतियाँ पारिवारिक एवं सामाजिक मुसीबतों का सामना बड़े साहस और वीरता से करती हैं। दोनों अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए दृढसंकल्प हैं । अतः मार्ग की समस्त बाधाओं का मुकाबला बड़ी दृढता से करती हैं ।

'एक टुकडा धरती' कहानी में लेखिका ने पुरुष की तुलना में नारी को अधिक सशक्त बताया है। शकुंतला का पति आर्थिक संकट के आने पर परिवार के प्रति अपने उत्तरदायित्व को भुलाकर आत्महत्या कर लेता है।किन्तु शकुंतला इन कठिन परिस्थितियों में भी अकेले निर्भिक होकर अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह करती है । लेखिका ने नारी के जीवन-संघर्ष में जूझने की अदंम्य शक्ति का परिचय इस कहानी में प्रस्तुत किया है । पुरुष की पलायनवादी मानसिकता की तुलना में नारियों की जीवन के यर्थाथ से जूझने की शक्ति ही मानव-जीवन , परिवार , समाज और देश के लिए कल्याणकारी कही जा सकती है ।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि उक्त कहानियों के अतिरिक्त पूर्व वर्णित रामदरश मिश्र जी द्वारा लिखित 'इज्जत' कहानी में नारी के प्रति समाज के दृष्टिकोण में आ रहे बदलाव को चित्रित किया गया है। कहानी में अशोक नामक नवयुवक,नारीयों का पक्षधर है। वह नारीयों के लिए समाज के ठेकेदारों से लड़ता है। यहाँ पुरुष के

बदलते हुए मानसिक अभिगम को उजागर किया गया है।

नारी जीवन से संबंधित उपर्युक्त सात कहानियों में नारी की दयनीय दशा, उनकी संवेदना युक्त मनोस्थितियाँ, उन पर हो रहे अत्याचार तथा इस सबमें उभर कर सामने आने वाली नारी के सशक्त, संधर्षशील, आत्मनिर्भर स्वरूप को देखा जा सकता है। आज की नारी अपनी अस्मिता के प्रति जागरुक एवं आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए संधर्षरत दिखाई देती है ।

ग) दहेज प्रथा एवं विवाह-समस्या से संबन्धित कहानियाँ :--

दहेज प्रथा भारतीय समाज का एक ऐसा अभिशाप है जिसने असंख्य निर्दोश युवतियों के जीवन को जीते जी नर्क बना दिया है। यह कुप्रथा कब से और कैसे शुरु हुई यह कहना मुश्किल है, लेकिन आधुनिक युग में शिक्षित जनता के बीच भी उसके राक्षसी पंजे फैले हुए हैं।

प्राचीन-काल से ही दहेज प्रथा समाज के लिए भयंकर अभिशाप बनी हुई है। लेकिन अब समाज में दहेज प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया है । समाज में अर्थ की प्रधानता होने के कारण सामाजिक गौरव और भौतिक वैभव की प्रतियोगिता इतनी बढ गई है कि इस प्रथा का धृणित रूप दिन-प्रतिदिन विकसित एवं विकृत होता जा रहा है। समाज में उच्चवर्ग और निम्नवर्ग पर इसका सबसे अधिक प्रभाव पड़ रहा है । पहले दहेज कन्या के पिता की इच्छा पर निर्भर करता था लेकिन अब यह ससुराल वालों की विवाह से पूर्व की शर्त बन गया है । आज दहेज प्रथा के कारण लड़कियो की स्थिति दयनीय हो रही है । इस कुप्रथा के कारण अनेक कन्याओं को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ रहा है।दूसरा केवल कन्याओं का जीवन ही इससें दुःखी नहीं होता बल्कि माँ-बाप का जीवन भी नरक बन जाता है। इस कुप्रथा के कारण मनुष्य अधिक से अधिक लालची, आलसी और प्रमादी बनाता जा रहा है।

दहेज प्रथा वास्तव में एक धुन है, जो धीरे-धीरे समाज को खाती जा रही है । जिसके कारण समाज का सांस्कृतिक पतन हो रहा है । दहेज प्रथा की कुरीतियों को रोकने के लिए सरकार ने 'दहेज निषेध' अधिनियम पारित किया है, फिर भी देश के कोने-कोने में, समाज के प्रत्येक वर्ग में इसका व्यापक चलन है । आज आवश्यकता इस बात की है कि इस कुप्रथा के विरुद्ध में जनमत को जागृत किया जाए तथा युवा पीढ़ी को शिक्षित किया जाए ।

दहेज-प्रथा का एक और सामाजिक दुष्परिणाम है अनमेल विवाह। प्रेमचन्द जी ने इस सामाजिक-दुषण पर आधारित 'निर्मला 'जैसे प्रसिद्ध उपन्यास की

रचना की थी। इस अनमेल विवाह से आज भी अनेक लड़के-लड़कियों का विवाहिक जीवन कटु और असफल होता है । कहीं-कहीं पति-पत्नी के सम्बन्ध टूट कर बिखर भी जाते हैं। पारिवारिक सम्बन्धों में अलगाव की परिस्थिति का एक और कारण हमारी सामाजिक रूढ़िवादी मान्यताएँ भी होती हैं। यद्यपि आज आधुनिकता की हवा में इसकी जकड़न एक सीमा तक ढीली हुई है, फिर भी अनेक परिवार अंतर्जातिय विवाह या अन्तर्प्रांतीय विवाह को अस्वीकार करके टूटते हैं - बिखरते हैं । समकालीन समाज की उपर्युक्त समस्याओं का यथार्थ निरूपण करके कहानीकार राष्ट्र के हित में समाज को अधिक स्वस्थ और मधुर सम्बन्धों से सुदृढ़ बनाने के लिए प्रयत्नशील प्रतीत होते हैं।

समाज की विवाह से सम्बन्धित समस्याओं और दहेज-प्रथा के दुष्परिणामों को उजागर करने वाली निम्नलिखित कहानियाँ हैं --

विवेकी राय कृत 'बेटे की बिक्री ', 'माँग ', 'विद्रोह ' तथा राजेन्द्र अवस्थी की 'पीढ़ियाँ '।

(i) माँग -- विवेकी राय

विवेकी राय की प्रस्तुत कहानी दहेजप्रथा से उत्पन्न माँ-बाप और बेटी की दयनीय दशा का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करती है। दहेज हमारे समाज का एक कुष्ट रोग सा है। इसके व्यापक दुष्प्रभाव को देखकर ही लेखक यह सोचने पर मजबूर है कि आस्तीन के साँप सी इन सामन्तवादी रूढियों से रक्षा का कोई मार्ग है ?

मकर संक्रांति के बाद घुटुर अपनी बेटी के लिए वर खोजने लगता है। उसकी पत्नी कहती है कि "लड़का पढ़ा लिखा और सुन्दर होना चाहिए, नौकरी है तो सोने में सुगंध"[48] घुटुर सबसे पहले तिरासीपुर गाँव में रामबाबू के यहाँ पहुँचता है। उनका स्वागत बड़े जोर-शोर से किया जाता है। तरह-तरह के पकवान और मिठाईयाँ खिलाई जाती है। शाम को जब घुटुर को पता चलता है कि यहाँ जलपान के अनुसार तिलक का अनुमान लगाया जाता है, तो शाम के खाने में उनकी भूख ही मर जाती है। घुटुर बाबू जब रामबाबू से तिलक की बात करता है तो रामबाबू कहते हैं "आप सीधे मालूम होते हैं । दस हजार रूपया और मोटर साइकिल आदि के तो लोग खोल-खोलकर पेशगी दे रहे हैं । " [49] रातभर घुटुर को नींद नहीं आती , सुबह एक सप्ताह की मुहलत माँग कर जान बचाता है ।

घुटुर को जब सीवान गाँव में बी.ए. पास लड़के का पता चलता है, तो वह वहाँ पहुँच जाता है । तिलक की बात करने पर लड़के का पिता बनवारी सिंह कहता है कि"हम लोग शादी ब्याह करते है लड़के-लड़की की खरीद बिक्री नहीं करते।

यह सब सुन लड़की की माँ घुटुर से कहती है"लड़के में जरूर कोई भीतर की कसर है शादी यहाँ नहीं होगी । " [50]

घुटुर गाँव के नारद तिवारी को ले सेतारी गाँव के हाकिम प्रसाद के यहाँ आते हैं। तिलक की बात होने पर नारद बोला -"सात हजार का गहना बनवा देंगे। लड़के के लिए साइकिल, घडी आदि तथा पाँच सौ रूपया खर्च के लिए ।"[51] यह सब सुन घुटुर की सांस फूल जाती है। नारद समझाता है कि पानी चढ़ा गहना दे देंगे और कुछ नहीं देंगे। शादी तो हो जायेगी फिर कोई कुछ नहीं कहेगा।

बरात आती है, शादी की रस्म शुरू होती है।लड़का जैसे ही हाथ में सिन्दूर लिए झुकाता है की उसके पिता कड़कती आवाज में रोकते हुए कहते हैं " पहले गहनों की जाँच होगी, घुटुर अपनी लड़की की मांग को देखता रहता है जिस पर से कपड़ा हटाकर उघाड़ दिया था।

'मांग'कहानी में निरूपित चेतना --

प्रस्तुत कहानी में विवेकी राय जी ने कन्या के विवाह कि समस्या को उठाया है। दहेज के कारण माता-पिता के लिए अपनी कन्या का विवाह करना एक मुश्किल समस्या बन गयी है । भारतीय समाज में लड़की जैसे ही बड़ी होने लगती है तो माँ-बाप की चिन्ताएँ भी उसके साथ-साथ बढ़ती जाती हैं । वे इस बात से चिन्तित रहते हैं कि कन्या के लिए दहेज का प्रबंध कहाँ से होगा। घुटुर अपनी कन्या के विवाह के लिए जब वर खोजना शुरू करता है तो उसके सामने अनेक कठिनाईयॉ आती हैं। हर माँ-बाप की तरह घुटुर की पत्नी चाहती है कि लड़का पढ़ा-लिखा होना चाहिए। घुटुर सबसे पहले रिशते के लिए तिरासीपुर गाँव के रामबाबू के यहाँ पहुँचता है। दहेज के सम्बन्ध में रामबाबू के विचार जानकर घुटुर को पसीना आ जाता है । वह जैसे-तैसे अपनी जान बचाकर वहाँ से भागता हैं ।

घुटुर उसके बाद सीतान गाँव के बनवारी के यहाँ जाता है। बनवारी का लड़का बी. ए. पास है । घुटुर इस बार पहले ही दहेज की बात पूछता है । यहॉ अप्रत्याशित जवाब प्राप्त होता है। लड़के का पिता दहेज के बिना ही विवाह के लिए राजी है।अत:घुटुर की पत्नी को आशंका होती है कि लड़के में अवश्य ही कोई खोट होगा। अत: वे अपनी लड़की का विवाह वहाँ करने को तैयार नहीं होते हैं।घुटुर फिर से वर ढुँढ़ने लगता है। योग्य लड़के की तलाश से परेशान होकर वह गाँव के नारद को लेकर सेतारी गाँव में हाकिम प्रसाद के यहाँ जाता है । हरिप्रसाद द्वारा प्रस्तुत दहेज़ की बात से घुटुर घबरा जाता है।परन्तु नारद आश्वासन देता हुए कहता है कि विवाह की बात पक्की कर लो बाद

में देखा जाएगा। उसने उपाय में सात हजार के गहने के स्थान पर पानी चढ़ा हुआ गहना देने की योजना बताई । शेष चीजें नदारद । नारद की बात से आश्वसत्त होकर घुटुर ने बेटी का विवाह तय किया। शादी के समय जैसे ही लड़की की माँग में सिन्दुर डाला जाने लगता है, तभी लड़के का पिता कहता है पहले गहनों की जाँच होगी। अत: घुटुर की बेटी की मांग खुली की खुली रह जाती है ।

प्रस्तुत कहानी में दहेज प्रथा के कारण बेटी की शादी को लेकर मॉ-बाप की परेशानी, बेटी के लिए योग्य वर प्राप्ति की कठिनाई तथा दहेज की समस्या को सुलझाने,परिवार के बेइज्जत होने की सम्भावना,लड़की की सम्वेदना आदि का यहाँ यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया हैं। विवाह दो ह्रदयों का मेल है, दो परिवार का मेल है,जो परस्पर के इस संबंध से प्रेम और खुशी को व्यापक रूप प्रदान करता है।लेकिन दहेज-प्रथा के कारण विवाह,प्रेम और खुशी का माध्यम न बनकर चिन्ता, व्यग्रता, परेशानियाँ तथा परस्पर की कटुता का कारण बन जाता है । "कहानी में घुटुर बाबू की कन्या की शादी दान-दहेज के संक्रामक कुष्ठ रोगी समाज के यथार्थ परिप्रेक्ष्य को गहराई से उभार कर विवाह की पवित्रता के प्रति सम्वेदना जगा देती है । "[52]

(ii) 'विद्रोह'- विवेकी राय

विवेकी राय ने अपनी विद्रोह कहानी में विधवा के साथ दहेज की समस्या को उठाकर उसका विरोध प्रकट किया है। सुनील एम. ए. पास है फिर भी वह अपने आप को समाज का बंधुआ गुलाम समझता है । वह दीनाबाबू की विधवा बेटी को मन ही मन चाहने लगता है । वह देखता है कि विधवा हो जाने के बाद उसे घर के अन्दर बन्द करके रखा जाता है उसका हँसना,बोलना दुर्लभ है । वह कई बार उससे मिलना चाहता है परन्तु मिल नहीं पाता । सुनील सोचता है " उसका पति मर गया इसमें लड़की का क्या दोष है वह तो परम सुलक्षणी देवी है । "[53]

सुनील पिताजी की दहेज संबन्धी बातों को सुनकर बडा दु:खी होता है । उसे लगता है कि पिताजी उसका विवाह नहीं बल्कि विवाह के द्वारा उसका मोल लगा रहे हैं । सुनील के पिता लड़की वालों से कहते हैं " तिलक तो इतना आप लड़के को चढ़ा देंगे, मुझे क्या मिल रहा है ? मैं कहाँ से क्या खर्च करू ? तो साहब सारा व्यय बोझ आपके सिर। दहेज की लिस्ट के अतिरिक्त नाच,बाजा, शामियाना, टेंट, रोशनी, बिछौना, बारात जाने-आने की सवारी, दुल्हे की पृथक कार आदि सब प्रबन्ध आपको करना है। "[54]

सुनील को यह अच्छा नहीं लगता वह मन ही मन कुढ़ता है । उसे लगता है इससे तो अच्छा है कि उसे निलाम कर दें। वह सोचता है कि विवाह के बाद

अगर वह मर गया तो उसकी पत्नी का भी वही हाल होगा जो दीनाबाबू की बेटी का हुआ है। उसे लगता है आज विवाह, विवाह नहीं रह गया है, व्यवसाय बन गया है। लड़की का पुर्न विवाह इसलिए नहीं हो पाता कि फिर से विवाह का व्यय कौन उठाएगा ? वह निर्णय करता है कि वह "जिंदा दफ़न एक लड़की की देह पर से कफन उतार देने के लिए आगे बढ़ेगा।"[55] सुनील के सुधारवादी विचारों से उसके माँ-बाप चौंक जाते हैं । वह अपनी बात पर अटल रहते हुए कहता है कि मेरी बात आपकी समझ में नहीं आएगी ।

'विद्रोह'कहानी में निरूपित चेतना -

विवेकी राय ने प्रस्तुत कहानी द्वारा दो प्रमुख सामाजिक समस्याओं का एक आदर्श निराकरण यथार्थ की भूमिका पर प्रस्तुत किया है ।

प्रथम समस्या दहेज प्रथा से उत्पन्न योग्य वर-वधू की प्राप्ति की है। दहेज लेने या देने वाले लोग बेटा या बेटी की भावना की परवा नहीं करते।उनके लिए सन्तान आर्थिक लाभ का एक सशक्त साधन हैं । लडके को अधिक पढाते-लिखाते भी इसलिए हैं कि अधिक दहेज प्राप्त कर सकें ।

दूसरी समस्या विधवा विवाह की है। दहेद-प्रथा के कारण विधवा नारी कम उम्र की होते हुए भी वह पुनर्विवाह का अधिकार नहीं पाती है । जीवन की समस्त खुशियॉ समाज उससे छीन लेता है । वह जीवन पर्यन्त एक जिन्दा लाश की तरह साँसो का बोझ उठाकर घुमती है। नारी का जीवन नरक बन जाता है ।

विवेकी राय जी ने इन दोनों समस्याओं को सुनील के चरित्र द्वारा सुलझाया है । आज का शिक्षित युवक सुनील की तरह दहेज का विरोध करके किसी विधवा या दीन , दु:खी, पीड़ित कन्या का हाथ पकड़ने की हिम्मत करेगा तो भारतीय समाज पुन: अपने गौरव को प्राप्त करके प्रत्येक मनुष्य की झोली में सुख-शांति प्रदान करेगा। आज का युवक मानवतावादी दृष्टिकोण को अपनाते हुए सामाजिक व्यवस्था की नींव बने, यह संदेश प्रतिपादीत है ।

(iii) 'बेटे की बिक्री' - विवेकी राय

विवेकी राय की प्रस्तुत कहानी उनकी अन्य कहानियों की भाँति सामाजिक बुराई से जुड़ी हुई है । सामाजिक बुराई के मूल में भी वे दहेज प्रथा को ही पाते हैं । अत: प्रस्तुत कहानी भी दहेज प्रथा से सम्बन्धित कहीं जा सकती है ।

कहानी के कथानक में बनारसी बाबू पटना शहर की कॉलेज के अध्यापक है । अतः उनके विचार सुधारवादी हैं फिर भी सामाजिक रीति-रिवाजों के अनुसार वे अपनी बड़ी बेटी का विवाह गाँव के लड़के से करते हैं । इस विवाह के पश्चात् भी उनके मन में अप्रसन्नता बनी रहती है क्योंकि ग्रामीण समाज के अनुसार लड़की की छोटी ऊम्र में ही उसका विवाह करना पड़ता है । दूसरे विवाह में फिजुल खर्ची अधिक करने के बावजूद भी गाँव का समाज अप्रसन्न बना रहता है। अतःबनारसी बाबू यह निर्णय करते है कि अब छोटी बेटी का विवाह , बेटी की योग्य ऊम्र में और उसके अनुरूप युवक के साथ करेंगें। वे गाँव से वापिस लौटते समय अपने दोस्त रामविलास के बेटे माधवचन्द्र को पढ़ाने के लिए पटना ले आते हैं ।

पटना में बनारसी बाबू की देखरेख में माधवचन्द्र अपने अभ्यास में काफी उन्नति कर लेता है। जब माधवचन्द्र बी.ए. के प्रथम वर्ष में अभ्यास कर रहा होता है तब कुलथा गाँव के सम्पन्न निवासी कुलदीप नारायण अपनी बेटी के लिए माधवचन्द्र को योग्य लड़के के रूप में पाते हैं । उनका पण्डित द्विवेदी उन्हें सुचित करता है कि माधवचन्द्र का विवाह बनारसी बाबू की बेटी के साथ निश्चित हो गया है। कुलदीप नारायण पण्डित से यह खबर सुनकर भी माधवचन्द्र से अपना मन हटा नहीं पाता । उनका विश्वास है कि " शादी लड़के लड़की की नहीं रूपये की होती है । "[56]

पण्डित जी, कुलदीप नारायण की बेटी के विवाह का प्रस्ताव लेकर रामविलास के पास पहुँचते हैं तो वह भी धन के लालच में मौन-भाव से प्रस्ताव को स्वीकार कर लेते हैं। समस्त कुलथा गॉव में माधवचन्द्र और कुलदीप नारायण की बेटी के विवाह की बात फैल जाती है। इलाहाबाद के एक इंजीनियर के पास भी, माधवचन्द्र का परिचय पहुँचता है,तो वे भी अपनी बेटी के विवाह का प्रस्ताव लेकर रामविलास के पास पहुँचते हैं । माधवचन्द्र के विवाह को लेकर कुलथा गाँव में कुलदीप बाबू और इंजीनियर साहब के बीच बोली की होड़ लगती है । कुलदीप बाबू पैंतीस हजार तक बोली लगाकर रूक जाते है ।

इस प्रकार आधुनिक समाज में विवाह के योग्य लड़के की मानों बाजार में किमत तय की जा रही हो । जैसे किसी बेजान किमती चीज की बाजार में निलामी होती है और सबसे अधिक रकम बोलने वाला व्यक्ति उस चीज का मालिक बन जाता है। इस तरह दहेज देनेवाले भी, अपनी बेटी के विवाह के लिए दामाद की बोली लगाते हैं। आज का शिक्षित युवक इस कुप्रथा का शिकार बनकर अपनी स्वतंत्र अस्मिता खो चुका है । ऐसे इन्सान का जीवन एक बेजान चीज से बढकर क्या होगा ? भाव और विचार शून्य मनुष्य जड़ ही तो है ।

'बेटे की बिक्री' कहानी में निरूपित चेतना -

प्रस्तुत कहानी में विवेकी राय ने दहेज प्रथा से उत्पन्न दुष्परिणामों को निरूपित किया है। भारतीय समाज में आज भी अधिकत्तर वर्गो में इस कुप्रथा का बहुत अधिक प्रचार है । विशेष रूप से यह तब देखने को मिलता है जब लड़का उच्च शिक्षा ग्रहण कर लेता है या फिर अच्छी नौकरी में लगा हुआ होता है। तब लड़के के माता - पिता उसके विवाह के द्वारा कन्या पक्ष से अधिक से अधिक धन दहेज के रूप में प्राप्त करना चाहते है।आज विवाह,विवाह न होकर बाजार का रूप धारण करता जा रहा है। इस कुप्रथा के कारण कन्या का जन्म माँ-बाप के लिए एक अभिशाप बनकर रह जाता है ।

कहानी में बनारसी बाबू , कुलदीप नारायण और इलाहाबाद के इंजीनियर साहब तीनों ही माधवचन्द्र को अपना दामाद बनाना चाहते हैं । माधवचन्द्र पढा-लिखा युवक है लेकिन उसके पिता अपने बेटे के अनुरूप सुशील , पढ़ी लिखी कन्या की इच्छा न रखकर बेटे के समृद्ध ससुराल के लिए लालायित होते हैं। लेखक ने यहाँ यह बतलाने का यत्न किया है कि विवाह के लिए आज मित्रता,प्रेम जैसे भावात्मक सम्बन्धों की न तो कोई महत्ता रही है और न ही शिक्षा,संस्कार,कुलीनता आचार-विचार जैसे व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षो की महत्ता। आज समाज में अर्थ ही सब कुछ है। अर्थ के अंचल में सबका समावेश हो जाता है।जो आगे चलकर समाज की अनेक विषमता और समस्याओं को जन्म देता है।दहेज प्रथा ने ही आज मनुष्य को अपने सांस्कृतिक मूल्यों से विहीन और समाज को भ्रष्ट बनने के लिए प्रेरित किया है।व्यक्ति और व्यक्ति के बीच भावात्मक सूत्र को समाप्त करने वाला यह अर्थ का कीडा ही दहेज का राक्षसी रूप लिए समाज को निगल रहा है ।

(iv) 'पीढियाँ'- राजेन्द्र अवस्थी

राजेन्द्र अवस्थी की प्रस्तुत कहानी दो पीढ़ियों के वैचारिक अन्तराल को उभारने वाली है । सरदार सुरजीत सिंह पुरानी मान्यता के अनुसार बेटी का विवाह अपनी जाति के लड़के से करना चाहते हैं । पिता की एक मात्र बेटी जसबीर अन्य जातीय युवक से विवाह करके घर लौटती है तब पिता इस विवाह को अस्वीकार करके दोनों को घर से निकाल देते हैं । वे स्वयं अपनी नाराजगी से परेशान होकर एक अलग कमरे में बन्द रहते है।काफी समय के पश्चात् खिड़की से बाहर नजर पहुँचती है तो पाते हैं कि दामाद घर के बाहर बारिश में भीगता हुआ ख़ड़ा हैं।दामाद के प्रेम की एकनिष्ठता से पिता की रूढ़िवादी मान्यता टूट जाती है।अपने नौकर को बुलाकर बेटी और दामाद

के साथ भोजन की व्यवस्था की आज्ञा देते हैं ।

नौकर के चले जाने पर वह अपनी पुत्री जसबीर को आवाज देते हैं। लेकिन वह डर के कारण पिताजी के सामने नहीं आती। दरवाजे के पीछे से ही कहती है पिता जी, सरदार जी का गला कांपने लगता है वे पलंग से उठते हुए बोले बेटी जा उसे भी अन्दर बुला ले बाहर पानी बरस रहा है ठण्ड लग जाएगी ।

कहानी के अन्त में पिता का अपनी बेटी और दामाद को अपने पास बुला लेना मानों पीढ़ियों के संघर्ष को समाप्त कर देता है ।

'पीढ़ियाँ'कहानी में निरूपित चेतना -

राजेन्द्र अवस्थी की ' पीढ़ियाँ ' कहानी दो पीढ़ियों का वैचारिक संघर्ष से सम्बन्धित कहानी है।सुरजीत सिंह पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करता है। वे चाहता है कि उसकी एकमात्र पुत्री जसबीर का विवाह उसकी इच्छानुसार उसकी जाति-बिरादरी के लडके से हो। यहाँ जसबीर अपने साथ अभ्यास कर रहे पर जातिय युवक से प्रेम करती है,और उसी से विवाह भी करती है।पिता, बेटी के इस अन्तर्जातिय विवाह को स्वीकार नहीं कर पाता। बेटी और दामाद जब घर आते हैं, तब वह क्रोधित होकर उन्हें अस्वीकार करता हुआ घर से निकल जाने को कहता है। थोड़ी देर के बाद दामाद को वर्षा में भीगता हुआ देख, पिता का ह्रदय परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार जाति-पाँति के सामाजिक गौरव की तुलना में मानवीय सम्वेदनाओं की विजय दर्शायी है।

"प्रस्तुत कहानी में सामाजिक रूढ़िवादिता या सामाजिक मान्यताओं के बन्धन से मुक्त मानवीय सम्वेदना के सूत्र से बन रहे नये समाज का चित्र खींचा है। हर युग में दो पीढ़ियों का संघर्ष तो बना ही रहता है लेकिन आधुनिक युग की वैचारिक क्राँति ने दोनों पीढ़ियों को मानवीय सम्बन्धो से जोड़कर एक-दूसरे के निकट ला खड़ा कर दिया है। दो पीढ़ियो का संघर्ष, अक्सर धर्म, नैतिकता, संयम आदि पर आधारित जीवन मूल्य को लेकर उत्पन्न होता है।"[57] लेखक ने ऐसे संघर्षो के निराकरण का मार्ग मानवीय सम्बन्धों की महत्ता के प्रतिपादन द्वारा किया है ।

'विवेकीराय जी' द्वारा लिखित 'बेटे की बिक्री' कहानी में लेखक ने दहेज प्रथा की समस्या को चित्रित किया है । आज के इस आधुनिक शिक्षित वातावरण मे दहेज प्रथा ने बाज़ार का रूप धारण कर लिया है। समाज के लालची और लोभी लोग अपने बेटे की शिक्षा का व्यय भी कन्या पक्ष वालों से लेना अपना अधिकार समझते हैं। रामविलास का पुत्र माधव जब अधिक पढ़ जाता है तो कुलदीप बाबू अपनी कन्या का विवाह उससे कराना चाहता है। रामविलास भी दहेज के लोभ में हाँ कह देते है । जब

यह खबर इलाहाबाद पहुँचती है तो वहाॅ के इन्जीनियर भी अपनी कन्या का रिश्ता ले रामविलास के यहाँ पहुँच जाते है। दहेज का मोह रामविलास के मुँह को बन्द कर देता है । माधव की बोली लगती है इन्जीनियर साहब जीत जाते हैं ।

लेखक ने यहाँ यह बताना चाहा है कि अब विवाह-विवाह न होकर व्यवसाय बन गया है। दहेज प्रथा के दुष्परिणाम स्वरूप अधिकांशतः बहू को ही कष्ट भोगने पड़ते हैं। पर्याप्त दहेज न मिलने पर ससुराल मे उसे अपमानित किया जाता हैं। कटुवचनो द्वारा उसके मन को बेधा जाता है या उसे जला दिया जाता है। इस कहानी में लेखक ने नारी के प्रति सहानुभूति जताते हुए उसकी विकट परिस्थिति का चित्रण नहीं किया है अपितु मनुष्य के लोभ और लालच से उत्पन्न सन्तान की दयनीय स्थिति का चित्रण किया है ।

'विवेकीराय जी'द्वारा लिखित 'विद्रोह'कहानी मे भी दहेज की समस्या को उठा उसका निराकरण प्रस्तुत किया है।लेखक ने यह बताने का यत्न किया है कि शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कारण यह परिवर्तन दिखाई दे रहा है। शिक्षित युवा वर्ग अब इस कुप्रथा की बुराइयों को जानकर इसका बहिष्कार करने लगा है । सुनील शहर से शिक्षा प्राप्त कर गाँव आता है। वह देखता है कि पिता जी उसके विवाह पर कन्या पक्ष से अधिक से अधिक धन वसुलना चाहते हैं। वह अपने पिताजी का विरोध करते हुए गाँव की एक विधवा कन्या से विवाह करने की बात कहता है ।

लेखक ने इस कहानी के माध्यम से नई पीढ़ी को जागृत करने का यत्न किया है । शिक्षित युवक सुनील को केन्द्र में रखकर सम्पूर्ण युवा वर्ग को इस कुप्रथा के विरोध में यत्न करने के लिए प्रेरित किया है।लेखक ने यहाँ विधवा विवाह के प्रति भी नयी विचार धारा को चित्रित किया है,जो समाज के उत्थान के लिए सराहनीय है ।

'मांग'कहानी में 'विवेकीराय जी'ने दहेज प्रथा के कारण उत्पन्न हुई कन्या के विवाह की समस्या को चित्रित किया है। आज कन्या के विवाह के अवसर पर वर-पक्ष की माॅग पूरी करने के लिए कन्या के माता-पिता को कर्ज लेने को विवश होना पड़ता है।जो लड़का जितना पढ़ा लिखा मिलता है उसके माता-पिता उसके विवाह के द्वारा कन्या पक्ष से अधिक से अधिक धन दहेज के रूप में प्राप्त करना चाहते हैं। आज विवाह बाजार का रूप धारण करता जा रहा है। कन्या शिक्षित, गुणवान, आज्ञाकारी है कि नहीं किसी को इस बात की चिन्ता नहीं है।चिन्ता है तो केवल दहेज की। घुटुर की कन्या की माँग में जैसे ही सिन्दुर ड़ाला जाने वाला था कि तभी लड़के का पिता कहता है कि पहले गहनों की जाँच होगी ।

लेखक ने यहाँ यह बताने का यत्न किया है कि घुटुर की कन्या के समान आज भी देश की अधिकत्तर कन्याओं के साथ यही हो रहा है। समाज के अधिकांश लोग इस कुप्रथा के कारण दु:खी एवं पीड़ित जीवन व्यतीत कर रहे है ।

'पीढ़ियाँ' कहानी में दो पीढ़ियों के संघर्ष को चित्रित किया है। पहली पीढ़ी प्राचीन परम्पराओं के अन्धकार में डुबी हुई है लेकिन नई पीढ़ी इन जाति-पाँति, छुआ-छूत की भावना को त्याग कर अन्तर्जातिय विवाह कर सदियों से चली आ रही प्राचीन रूढ़ियो और कुरीतियों को तोड़ रही है ।

"सामाजिक चेतना से सम्बन्धित उपर्युक्त सत्रह कहानियों में अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि साठोत्तरी हिन्दी कहानी भारतीय समाज का सच्चा दर्पण है ।"[58] इस काल की कहानियों में सामाजिक वर्ग भेद, नारी चेतना तथा दहेज-प्रथा से दूषित विवाह समस्या का आकलन करके उनमें युगीन परिवेश की वास्तविकता को प्रस्तुत किया है।देश की आम जनता के सामाजिक यथार्थ-चित्रण द्वारा परम्परागत दूषित व्यवस्था और रूढ़ियों, मान्यताओं को तोड़ने तथा नये क्रॉतिकारी, सुधारवादी व्यवस्था को प्रतिपादित करके भारतीय समाज को स्वस्थ , सुखप्रद एवं गौरवान्तित करने का कहानीकारों के प्रयत्न किया है जो उनकी राष्ट्रवादी भावना का परिचायक कहा जा सकता है ।

३) आर्थिक चेतना का स्वरूप -

मानव-जीवन को परिचालित करने वाले विभिन्न पक्षों में अर्थ,सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग है । आज अर्थ वह धरी है जिस पर मनुष्य का व्यक्तिगत, सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन गतिशील है।समग्र देश की अर्थ-व्यवस्था ही जनजीवन के स्तर को ऊँचा उठाने में सहायक या अवरोधक होती है । यदि प्रशासन द्वारा परिचालित अर्थ-व्यवस्था जनता को जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं को प्राप्त करवाकर अमन-चैन और सुख -सुविधा के अवसर उपलब्ध करवा सकती है तो वह सफल राजतंत्र कहा जा सकता है अन्यथा राजनीतिक तंत्र भी चरमरा जाता है ।

सर्वविदित है की दो सौ साल के अंग्रेजी शासन के दरम्यान देश की आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई थी। समस्त विश्व में,जिस देश की समृद्धि के यशोगान दूर-दूर तक प्रतिध्वनित होकर, लोगों को भारत यात्रा के लिए आकर्षित करते थे, उस देश की अधिकांश जनता अंग्रेजी शासन की कूट आर्थिक नीतियों के परिणाम स्वरूप दरिद्र, भूख से पीड़ित और अर्धनग्न हालत में जी रही थी ।

स्वतंत्रता के पश्चात् सरकार के सामने यह सबसे बड़ी चुनौती थी कि देश की आर्थिक-व्यवस्था को कैसे सुधारा जाए ? दरिद्रता के शिकंजे में वर्षो तक

जकड़ी हुई जनता की अपेक्षा को पूरा करना भारत सरकार का सर्वप्रथम उत्तरदायित्व बना था। सरकार ने इस दिशा में कुछ ठोस कदम भी उठाये। आर्थिक विकास की कई पंचवर्षीय योजनाओं का आयोजन किया गया। देश की अस्सी प्रतिशत जनता जो गाँव में बसी हुई थी,उनको अंशमात्र की राहत पहुँचाकर उनके जीवन स्तर को ऊपर उठाने के उद्देश्य से इन योजनाओं में विविध कार्यक्रमों को समाविष्ट किया गया।ग्राम सुधार के लिए जमींदारी उन्मूलन, भूदान-योजना,सहकारी कृषि, धरेलू उधोग धन्धों को प्रोत्साहन, सिंचाई की व्यवस्था,एवं सामुदायिक योजनाओं को लागू किया गया। कहना न होगा कि हमारे आलोच्य काल के पूर्व ही लगभग सभी पंचवर्षीय योजनाएँ पूर्ण हो चुकी हैं, किंतु इसके परिणाम - अप्रत्याशित एवं उल्टे ही पाए गये हैं । संक्षेप में ये योजनाएँ इतनी कारगत सिद्ध नहीं हो पायीं। सरकार के बड़े-बड़े समाजवादी वादे, अर्थनीतियों के बड़े कागजी परिणाम, नारेबाजियाँ आज खोखले सिद्ध हुए हैं । स्वतंत्रता प्राप्ति के पचास साल बाद भी देश में गरीबी , बेकारी , बेरोजगारी , अराजकता जैसी बुनियादी समस्या देश व्यापी अपना राक्षसी मुँह खोले हुए है । योजनाओं में करोड़ों रुपयों की आहुती दी गई लेकिन परिणाम शून्य । इस असफलता के कारण रूप में प्राकृतिक आपत्तियों एवं देश ने झेले हुए दो-दो संरक्षात्मक युद्ध को दर्शाया जाता है , लेकिन यह सर्वज्ञात है कि राजनेताओं, अफसरों उधोगपतियों, मिल-मालिक, पूंजीपतियों की मिली भगत ने देश के अर्थतंत्र को नाकामयाब एवं असफल बनाया है।

स्वातन्त्रयोत्तर काल में देश के समक्ष पुन: निर्माण का प्रश्न एक भयंकर विकट चुनौती के रूप में खडा था। नेहरू युग में ' इंडस्ट्रियल रेवाल्यूशन पॉलिसी ' के अंतरगत बृहद उत्पादन विकास को अनिवार्य बनाया गया।विशाल उधोगों को प्रोत्साहन देकर देश को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर करने का यत्न किया गया , नेहरू का दृष्टिकोण गैर-पूंजीवादी नीति द्वारा छोटे-बड़े उद्योगों के विकास और कृषि क्षेत्र में प्रचुर उत्पादन-शक्ति में वृद्धि करना था।"[59] लेकिन अर्थतन्त्रीय संगठनो, नये उत्पादक-सम्बन्ध सूत्रों के सामाजिक एवं आर्थिक सुधारों को ठीक तरह विकसित न कर पाने पर देश के अर्थतन्त्र पर पूँजीवाद हावी हो गया।[60]दूसरी ओर देश को सुखी-समृद्ध बनाने के नेहरू के सपनों को साकार करने के बहाने विदेशी धन कर्ज के रूप में प्राप्त किया जाने लगा,लेकिन इन रूपयों का वितरण गरीब वर्ग के बीच न होकर पूँजीपतियों को मील, फैक्ट्ररी, कारखाने के बहाने से हस्तगत होने लगा । बढ़ते हुए औद्योगिकरण और देश की मिश्रित अर्थव्यवस्था के अन्तर्दश में उत्पादन का राष्ट्रीयकरण एवं वितरण के निजीकरण ने शनैः शनैः नेताओं, मन्त्रीयों, अफसरों, उद्योगपतियों, पूँजीपतियों के बीच

नये गठबन्धन के सम्बन्ध स्थापित हुए। श्रीमती इन्दिरा गाँधी के शासनकाल में बैंकों का राष्ट्रीयकरण जैसे महत्वपूर्ण अर्थनीति अपनाने के बावजूद भी देश की अर्थव्यवस्था पर पूँजीपतियों का प्रचुर प्रभाव बढ़ता रहा। स्थिति यहाँ तक बिगड़ गई कि देश की सरकार के बनने-बिगड़ने का आधार भी इन पूँजीपतियों के संकेतों पर निर्भर होने लगा। इस प्रकार देश के अर्थतन्त्र पर पूँजीवाद ने हावी होकर परवर्तीकाल की समग्र देश जीवन की आर्थिक चेतना को अवरूद्ध कर दिया। विदेशी पूंजी के आगमन ने देश के अर्थतन्त्र को और भी उलझा दिया।अनेक विदेशी कम्पनियों ने हमारे पूँजीपतियों की साझेदारी से देश में अपने गहरे पैर जमाये। इन कम्पनियों के परिचालन हेतु बड़ी तनख्वाह पर विदेशी कर्मचारी यहाँ पल रहे थे और देश के शिक्षित युवा बेकारी से दर दर भटक रहे थे ।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि नहेरू-युग से लेकर आज तक सरकार द्वारा परिचालित आर्थिक विकास की योजनाएँ विफल एवं प्रत्याशित परिणाम से शून्य रही है। इन आयोजनों की असफलता का मूल्यांकन करते हुए श्री चरणसिंह दलीय राजनीतिक परिवेश में व्याप्त स्वार्थ , सत्ता परश्ती की होड़ के बीच उलझे राजनेताशाहों (मन्त्री) की दुर्नीतियों को दोषी मानते हैं। "[61]

देश के कई आर्थिक आयोजन कुछ सफल अवश्य हुए हैं लेकिन शत-प्रतिशत नहीं । स्वतंत्र्योत्तर काल में देश के नवनिर्माण के लिए हर एक नागरिक को जागरूक एवं कर्त्तव्य-परायण होना चाहिए था लेकिन सभी ने अपने कर्त्तव्यों को भूला दिया है । चाहे राजनेता हो, मन्त्री हो, अफसर हो, डॉक्टर, वकील, मिलमालिक, मजदूर, पूँजीपति, किसान या अन्य कोई साधारण नागरिक ही क्यों न हो, सबने अपने स्वार्थ हेतु देश के प्रति अपने कर्त्तव्य और लोक कल्याण के उद्देश्य को भुला दिया हैं। राजनेताओं-मन्त्रियों ने जनता के बीच बड़े-बड़े समाजवादी वादे किये , सपने दिखाये लेकिन उनकी स्वार्थी दुर्नीतियों की वजह से देश में समाजवाद आ नहीं पाया। ग्राम विकास के उद्देश्य से ग्राम-सुधार के विविध कार्यक्रमों के अंतर्गत जमींदारों, जागीरदारों तथा सामंतों के प्रचुर अधिकारों को नष्ट किया गया,लेकिन उनके स्थान पर नये शोषक वर्ग को जन्म मिला।जमींदारी उन्मूलन की चेतना से समाज में समानता पुष्पित होने के स्थान पर विषमता ही अधिक पल्लवित होती गई।गाँवों में भी भ्रष्टाचार, पक्षपात, भाई-भतीजावाद, रिश्वत आदि विकृतियों ने सरकार की आर्थिक योजनाओं को विफल बनाया है लेकिन जनता में नई जागृति के संकेत भी स्पष्ट मिलने लगे हैं । वे अपने निजी मानवीय अधिकारों की प्राप्ति के लिए सक्रिय हैं । गाँवों के जीवन स्तर को वहाँ के निवासियों के सामुहिक श्रम द्वारा उन्नत करके जनता के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन

में क्रान्ति का सूत्रपात अवश्य किया है। इसके अन्तर्गत कृषि से सम्बन्धित अनेक कार्य- भूमि सुधार, सिचाँई की उन्नति, खाद, औजार, उत्तम बीज उपलब्ध करवाना,पशु-सुधार, सडकों की व्यवस्था, रोगियों के लिए चिकित्सालय, विविध प्रकार के कारीगरों के लिए प्रशिक्षण केन्द्र, कृषि सम्बन्धी वैज्ञानिक शिक्षा का प्रबन्ध, ग्राम उद्योग का विकास, सस्ते मकानों की उपलब्धि,खेल-कूद,मेला आदि।इससे स्पष्ट है कि स्वतन्त्र भारत में सरकार ने कई ग्राम-विकास तथा अन्य सामुदायिक योजनाँए तो चलाई लेकिन उन सब योजनाओं के नियंता इतने स्वार्थी और देश-द्रोही थे कि उन योजनाओं का बाहरी प्रदर्शन दिखाकर सरकारी ग्राण्टें हडप लीं । परिणाम स्वरूप ग्रामवासियों की दयनीय स्थिति में विशेष कोई सुधार नहीं हो पाया ।

दूसरी ओर औद्योगिकरण द्वारा देश को समृद्ध, आत्मनिर्भर और आधुनिकता की दृष्टि से विश्व के अन्य देशों के समकक्ष रखने के लिए दौड़-धूप शुरू हुई । औद्योगिकरण की प्रतियोगिता में पूँजीपतियों के साथ देश सेवक बने स्वतन्त्रता परवर्ती राजनेताओं ने अपने स्वार्थ हेतु गठबन्धन किये । स्वतन्त्रतोत्तरकालीन सरकारी नेताओं का ईमान इतना गिरा कि उन्होंने बड़े-बड़े पूँजीपतियों के हाथ अपनी और देश की इज्जत एवं नीतियाँ बेच दीं।मंत्रीयों एवं राजनेताओं की शह पाकर देश के पूँजीपति जनता का शोषण, चीजों की ऊँची किमतों से,मजदूरों का शोषण, कम तनख्वाह देकर और सरकार का शोषण करने लगे टैक्स अदा न करके। ये सब देश के शत्रु थे। इन पर कानूनों के माध्यम से नियन्त्रण रखने में सरकार असफल रही। देश की विशिष्ट वर्गीय (राजनेता, नौकरशाह और पूँजीपतियों) गठ-बन्धन की राजनीति ने देश जीवन के चतुर्दिक अनेक आर्थिक समस्याओं को जन्म दिया है।मँहगाई,बेकारी,बेरोजगारी,मिलावट आदि कई समस्याएँ प्रचुर हद तक बढ़ीं। औद्योगिकरण के दबाव की प्रभाव-परिणति की नगरी रचना में अमीर व गरीबों के दो वर्ग साफ दृष्टिगत होने लगे। अमीरों का जीवन ऐशों-आराम का था तो मजदूरों का जीवन गरीबी का। आर्थिक विषमताओं से परिपूर्ण, फलस्वरूप दोनों के बीच निरन्तर संघर्ष बना रहा। पूँजीवादियों की आर्थिक यातना से संत्रस्त हुआ बेचारा निर्धन मजदूर वर्ग, धनिकों के जुल्मों एवं अत्याचारों से उबरने के लिए छोटे-मोटे मजदूर संगठनों का आश्रय लेता गया। आज भी देश का विशिष्ट वर्ग ही अधिकाधिक प्रबल है।इसने जनता की प्रचुर समसामयिक समस्याओं को अपने स्वार्थ के खातिर कभी हल नहीं होने दिया है। अतः जनता का जीवन स्तर गत पचास साल की स्वतन्त्रता के पश्चात भी ऊँचा उठ नहीं सका, जिसकी कल्पना स्वतन्त्रता परवर्ती काल में जनता ने की थी ।

साठोत्तरीकालीन हिन्दी कहानीकारों ने हमारे संक्रान्तिपरक समाज

में हो रहे विभिन्न राजनीतिक परिवर्तनों , आर्थिक नीतियों की असफलता के कारण जनता का अभावग्रस्त जीवन एवं अन्य विभिन्न समस्याओं के बीच उलझ रहे जनता के समष्टिगत संकट को स्वंय अनुभव किया और साहित्यिक सम्वेदनात्मक स्तर पर उन्हें अपनी कहानियों में ढ़ाला हैं ।

स्पष्ट है कि वे देश के वर्तमान अर्थतन्त्र के खिलाफ क्रांति के लिए वर्ग चेतना को अनिवार्य मानता है। आज देश का अर्थतन्त्र लड़खड़ा रहा है। देश की साधारण जनता भूख और मँहगाई की मार से तड़प रही हैं। इसके साथ ही आज समाज में वर्ग समन्वय की भी भावना उभरने लगीं है। दोनों के बीच संघर्ष जारी है। सामंतवादी भावना और सर्वहारा वर्ग के बीच जो गहरी खाई आज दृष्टिगत हो रही है, उसे पाटने की आवश्यकता है। दोनों विरोधी भावनाओं में समन्वय स्थापित करने की जरूरत है। कहानीकार देश के सामाजिक-आर्थिक विकास में अवरोधक तत्वो कीं ओर ध्यान एकत्रित करके उनके निराकरण की दिशा में सोचने के लिए प्रेरित करते हैं।

आर्थिक चेतना को उजागर करने वाली कहानियों में निम्नलिखित कहानियॉ प्रमुख हैं -

'हरिजन सेवक'(मधुकर सिंह),'माया माटी और मानव'(राजेन्द्र अवस्थी),'संभल के बाबू' (भीष्म साहनी), 'युद्ध ' (सतीश जमाली), 'लाश' (सुभाष पन्त),'आक्रोश'(प्रीतिश्री),'बच्चे (सतीश जमाली)।

अध्ययन की दृष्टि से इन उपर्युक्त सात कहानियों को तीन भागों में विभाजित किया गया है :--

क) मजदूरों का विद्रोह ।

ख) शिक्षा के क्षेत्र में भ्रष्टाचार ।

ग) बेरोजगारी एवं बाल मजदूरी की समस्या ।

क) मजदूरों का विद्रोह -

आर्थिक चेतना से संबन्धित उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भी देश मे मिल-मजदूरों एवं खेत मजदूरों की स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ,लेकिन पाश्चात्य देशों में समाजवादी नीतियों एवं मजदूरों के संगठनों का विशेष प्रभाव भारतीय मजदूरो पर भी पड़ा है । दूसरे, ज्ञान एवं प्रचार प्रसारणों के माध्यम से मज़दूर एवं श्रमिक वर्ग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक एवं सक्रिय होने लगा है । मिल-मजदूर और क़ारखानों में काम करनेवाले अपने अधिकारों को पाने के लिए युनियनों का संगठन करने लगे हैं। जिससे की वे अपने वेतन के लिए कार्यअवधि,

स्वास्थ्य और आवास-निवास आदि सुविधाओं से सम्बन्धित माँग मालिकों के समक्ष निर्भय और प्रभावशाली रूप से रख सके । जब मालिकों द्वारा उनकी माँग अस्वीकार होती है, तब मजदूरों में असन्तोष की भावना आक्रोश बनकर प्रकट होती है । वे अपनी माँगों को मनाने के लिए हड़ताल और नारेबाजी आदि द्वारा अपनी आवाज बुलन्द करके सफलता की दिशा में अग्रसर होने का यत्न करते हैं।

खेत मजदूर भी बदलती हुई परिस्थितियों और प्रचार-प्रसार के माध्यमों से जागरूक हो उठा है। सरकार द्वारा दिये जा रहे प्रोत्साहन एवं अधिकार आदि को जानकर मालिकों के समक्ष अपने अधिकारों की माँग करने लगा है । आजादी के बाद सरकार ने जमींदारी प्रथा और बेगार प्रथा को समाप्त कर छोटे किसानों को शोषण के विष चक्र से मुक्त करने का यत्न किया है।भूमिहीन किसानों को खेत उपलब्ध करवाये। उनकी आर्थिक दयनीय स्थिति को देखते हुए, सरकार ने उनके उज्जवल भविष्य के लिए कई योजनाओं का निर्माण किया।आज किसान पहले जैसा दबा,कुंठित, पीड़ित एवं दुर्बल किसान नहीं रह गया है वह अब अपने अधिकारों के लिए संगठित होकर विद्रोह भी करने लगा है ।

स्वतन्त्रता के पश्चात् मजदूरों के अतिरिक्त घरेलू नौकरों की स्थिति में भी काफी सुधार हुआ है । महानगरों में घरेलू नौकरों ने अपने आर्थिक शोषण और अपमानित स्थिति को रोकने के लिए युनियनों का निर्माण किया है । नौकर वर्ग अब अपने मानवीय अधिकारों की सुरक्षा करते हुए छुट्टीयाँ , उचित वेतन , निश्चित कार्य अवधि आदि की माँग भी कर रहा हैं । महानगरों के प्रभाव के कारण नगर एवं शहरों का नौकर वर्ग भी आज अपने अधिकारों के प्रति सक्रिय होता हुआ दिखाई दे रहा है। पहले की तरह वह अब मालिकों की दया पर जीने वाला नौकर नहीं रहा है ।

आज तोड़फोड़, नारेबाजी, रेली, हड़ताल, अनशंन आन्दोलन आदि घटनाएँ देश में आम तौर पर देखने को मिल रही हैं। मिल-मजदूर, किसान और घरेलू नौकर आदि की लड़ाई अपने मालिको और सरकार के प्रति तीव्र होती जा रही है। यह प्रसन्नता का विषय है कि मजदूर वर्ग अपने अधिकारों के प्रति सजग एवं सचेत हैं। आन्दोलन और हड़ताल द्वारा माँग का दबाव अवश्य बढ़ता है,परन्तु हड़ताल,तोड़फोड़ नारेबाजी आदि से देश को बहुत आर्थिक हानि पहुँचती है। अत:सरकार को इस दिशा की तरफ अधिक ध्यान देते हुए उनके हित में कठोर कदम उठाने चाहिए। दूसरी तरफ मालिको को भी मज़दूरो और श्रमिकों की माँगो पर ध्यान देकर अपने आर्थिक लोभ को त्यागकर उचित रूप से विचार करना चाहिए। मजदूर और मालिकों के बीच की खाई जितनी घंटे वह समाज और देश के लिए हितकर होगी, क्योंकि राष्ट्र के

आर्थिक विकास मे मजदूर वर्ग का महत्वपूर्ण योगदान है। अब राष्ट्र के आम मनुष्य की तरह लोकतन्त्र में उन्हें वे सब अधिकार प्राप्त है जो जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं सम्बन्धित है ।

मजदूरों के विद्रोह से सम्बन्धित कहानियॉ निम्नलिखित हैं -- 'हरीजन सेवक ' (मधुकर सिंह), 'माया माटी और मानव ' (राजेन्द्र अवस्थी), 'युद्ध ' (सतीश जमाली), 'संभल के बाबू ' (भीष्म साहनी)।

(i) 'हरिजन सेवक'-मधुकर सिंह

'हरिजन सेवक 'वर्ग संघर्ष की कहानी है।उच्चवर्गीय सामन्त लोग गॉव के दुसाघ और हरिजन लोगों के ऊपर काफी अत्याचार करते हैं। मुंशीराम शरण लाल बिना किसी भेद-भाव के शिक्षा व ज्ञान प्रदान कर निम्न वर्ग के लागों में आत्मनिर्भरता और स्वाभिमान पैदा करने का प्रयास करते हैं । उनके इस प्रयास के कारण स्कूल में हरिजनों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी । वे उन्हें यह शिक्षा देते थे कि अत्याचार एवं शोषण का हमेशा मुकाबला करना चाहिए।कभी इनके सामने झुकना नहीं चाहिए। मास्टर मुंशीराम शरण लाल की वहज से हरिजनों के दो बच्चे मैट्रिक पास हो जाते है। मुखिया और उसके आदमियों के मन में मास्टर रामशरणलाल के प्रति नफरत पैंदा होती है । वे उनका तबादला करवा देते है ।

गॉव के हरिजन, मालिकों से मज़दूरी बढ़ाने के लिए कहते है। तो मालिक उनकी मॉगो को ठुकरा देते है। सभी हरिजन संगठित होकर यह निर्णय करते है कि" जब तक मजदूरी नहीं बढ़ेगी, वे लोग मालिको के यहॉ काम नहीं करेंगें, शहर जाकर मेहनत-मजूरी करेंगे, परन्तु मालिकों के सामने कभी हाथ नहीं पसारेंगे।"[62] कुछ दिनो तक वे मालिको के निर्णय का इन्तजार करते हैं।बाद में शहर जाकर काम करना शुरू कर देते हैं। मालिक अपने अपमान को सहन नहीं कर पाते और पीछे से उनके बच्चो और पत्नियों को तंग करते है, इतना ही नहीं सम्पन्न लोग इन हरिजनो की बस्ती में बम फेंक कर पुलिस में उन्हें नक्सलपंथी बताकर उनकी गतिविधियों के खिलाफ झूठी शिकायत दर्ज करवाते हैं।इस प्रकार हरिजनों को भयभीत करके उनके संघर्ष को कमजोर और असफल बनाने का यत्न किया जाता है। गॉव का मुखिया और अन्य उच्चवर्गीय लोगो द्वारा किये गये अत्याचारों के बावजूद भी सभी मजदूर एक रहते हैं।अत:मालिकों द्वारा उनकी बस्ती को जलाकर उन्हे ही दोषित भी ठहराया जाता है ।

पुलिस गॉव में आकर लगनराम से जब पूछती है कि आग कैसे लगी ? तो वह निर्भिक हो आगे बढ़ते हुए कहता है"हम लोगों को कुछ मालुम नहीं सरकार,हम

लोग तो मुँह अन्धेरे में शहर जाते हैं और रात में दस-ग्यारह बजे लौटते है।"[63]वह यह भी बताता है कि इस वर्ष जो गाँव में खेती नहीं हुई उनके जिम्मेदार हम लोग नहीं बल्कि मालिक लोग स्वंय है।यह सुन मुखिया आगबबुला हो उठता है और सबको जेल में डालने के लिए कहता है । पुलिस इन निर्दोष हरिजनों की एक न सुन इन्हें जेल ले जाती है ।

इस प्रकार मालिक और पुलिस के गठबन्धन से मजदूरो की स्थिति और भी दयनीय एवं पीडित हो जाती है ।

'हरिजन सेवक' कहानी में निरूपित चेतना -

'हरिजन सेवक' कहानी में श्री मधुकर सिंह ने यह बताया है कि उच्चवर्ग के लोग सदियों से अपना प्रभुत्व और अधिकार मजदूरों पर जमाते आये हैं लेकिन स्वतन्त्रता के पश्चात् शिक्षा के प्रचार-प्रसार, सरकारी नीतियों और प्रयत्नों तथा सामाजिक आन्दोलनों के कारण हरिजन और निम्नवर्ग के लोग अपने अधिकारों के प्रति सजग और सचेत हो गये हैं। अब यह वर्ग निरीह,दयनीय एवं दया पर निर्भर नहीं रह गया है बल्कि अपने विरूद्ध मनमाने अन्यायपूर्ण निर्णय के विरूद्ध प्रतिशोध की शक्तिमता के साथ उठ खड़ा हुआ है। यह संघर्ष उसके नवीन उद्‌बोधन का प्रतीक है।

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने गाँव के हरिजनों की स्थितियों में आ रहे बदलाव को निरूपित किया हैं। हरिजनो ने शिक्षा के द्वारा उनपर हो रहे आर्थिक अत्याचार की स्थिति को पहचाना। शान्तिपूर्ण रूप से अपने अधिकारों के लिए उचित माँग करते हैं लेकिन मालिकों के द्वारा उन माँगों के प्रति उदासीनता बतलायी गई, तब वे अन्य उपाय के रूप में शहर जाकर रोजी-रोटी कमाते हैं । उच्चवर्गीय लोग हरिजनों की इस हिम्मत और जागरूकता को सहज रूप में स्वीकार नहीं कर पाते। हरिजनों के बीबी बच्चों को परेशान तथा उनकी इज्जत से खेलकर हरिजनों को भयभीत कर उनके संघर्ष को समाप्त करना चाहते हैं । यहाँ सफलता न मिलने पर , उनकी बस्ती को नष्ट करके उन पर अपने अत्याचारों का पाशवी दौर ड़ालना शुरू करते हैं। पूँजीपति वर्ग सत्ता से मिलकर उन्हें समाज विरोधी और सत्ताविरोधी घोषित करवा देता है। इस प्रकार निर्दयी,अत्याचारी एवं आततायी उच्चवर्गीय लोगों के हरिजनों के प्रति दुर्व्यवहार को निरूपित किया है ।

इतिहास बताता है कि ताकत से कभी जबानें बन्द नहीं हुई,दमन का चक्र कभी एकता को तोड़ ऩहीं सका। यहाँ भी सभी मज़दूर जेल चले जाते है लेकिन मालिक के आगे झुकते नहीं हैं । वर्षो से मलिक इस सर्वहारा वर्ग का शोषण कम

मजदूरी देकर करता था लेकिन आज इस वर्ग में बेगार की शोषण प्रथा के विरूद्ध चेतना जाग्रत हुई है ।

इस प्रकार यह मालिकों के मनमाने अत्याचार, उनकी आर्थिक शोषण नीति आदि का विरोध करते है ।

(ii) माया,माटी और मानव - राजेन्द्र अवस्थी

'माया,माटी और मानव' कहानी में राजेन्द्र अवस्थीजी ने जमीदारी प्रथा में मालिक-मजदूरों के नाजुक सम्बन्धो को प्रस्तुत किया है। शम्भूसिंह अपने घर में उदास बैठें हैं आज उनके पुत्र की मृत्यु हुई है । पुत्र अपनी अन्तिम सासों तक दूध के लिए तड़पता रहा परन्तु उसे दूध नहीं मिल सका । शम्भूसिंह को याद आती है जब उनके पिता यदुनाथ सिंह जमींदार थे, तब उनके यहाँ किसी चीज की कमी नहीं थी। पिताजी की मृत्यु के बाद ज़मींदारी की वागड़ोर माँ ने सम्भाली क्योकि शम्भूसिंह अभी नादान थे। शम्भूसिंह की माँ ज़मींदारी का काम घर बैठे-बैठे बड़ी जिम्मेदारी से चलाती रही । वह कभी भी खेत में नहीं गई , उन्होंने कभी यह नहीं देखा की कितना अनाज निकला है , उनकी नजर में नौकर वास्तव में मालिक है। नौकर पर उनका अटूट विश्वास था ।

मालकिन ने कभी भी किसी की ईमानदारी पर शक नहीं किया।गाँव में किसी के यहाँ शादी होती , उसे जितना अनाज चाहिए उतना उसे मुफ्त में मिलता। एक दिन एक मजदूर गेंहू का बोरा बिना बताये अपने घर ले गया । दूसरे मजदूर ने मालकिन को बताया तो मालकिन ने उसे भी गेहूँ का एक बोरा दे दिया । और जो मजदूर पहले गेंहू ले गया था उसे सन्देशा भेजा कि और चाहिए तो ले जाना। मालकिन नहीं चाहती थी कि कोई उसके गाँव में भूखा रहे। वह यह भी जानती थी कि जो कार्य संगठित होकर हो सकता है वह अलग-अलग रहकर नहीं हो सकता । समय बदला मालकिन बुढ़ी हो गई तो उनके बेटे शम्भूसिंह ने ज़मींदारी की वागड़ोर सम्भाली । जमींदारी सम्भालते ही उन्होंने मजदूरों पर अत्याचार करने शुरू कर दिए। शम्भूसिंह ने मशीनों से काम लेना शुरू कर दिया जिससे मजदूर उससे दूर होते चले गये। आज जब ज़मींदारी नहीं रही और पुत्र की मृत्यु जैसी दुखद परिस्थिति में भी उनके पास कोई नहीं आया। शायद आज यह सब देखकर शम्भूसिंह को अपने द्वारा किए कार्यो से घृणा हो रही थी।

'माया,माटी और मानव'कहानी में निरूपित चेतना -

प्रस्तुत कहानी में मालिक और मजदूरों के बीच मानवतापूर्ण मधुर सम्बन्ध का निरूपण किया है । लेखक ने यह बताने का प्रयत्न किया है कि जब तक

मालिक, नौकर को अपना एक महत्वपूर्ण हिस्सा समझता है तब तक नौकर भी मालिक के प्रति वफादार रहता है। सुख-दुख में परस्पर एक दूसरे की सहायता करके मानवीय सम्बन्धो के सुखद परिणाम को दर्शाया गया है। अकसर ज़मींदारो ने ही किसानों पर मनमाने अत्याचार किए है परन्तु कहानी में ऐसे जमींदार को प्रस्तुत किया है जिसने किसानों को नौकर न समझ अपना भाई समझा ।

कहानी के अन्त में लेखक ने किसानों की शोषण के निरूद्ध विद्रोह की आवाज को उठाकर यह बताने का प्रयत्न किया कि जब तक मालिक उनके साथ अच्छा और मित्रता का व्यवहार रखते है तब तक नौकर भी मालिक की सेवा में कोई कसर नहीं छोड़ते , परन्तु जब मालिक अत्याचार करना शुरू कर देता है , तो मजदूर भी अत्याचार के विरूद्ध एक साथ खड़े हो उठते हैं । मजदूर आज अपने अधिकारों को जान चुका है अब वह किसी के भी अत्याचार को सहन नहीं कर सकता ।

(iii) 'संभल के बाबू' - भीष्म साहनी

'संभल के बाबू' कहानी में भीष्म साहनी जी ने गृहस्वामी और घरेलू नौकर के बीच दो पीढ़ियों के बदलते हुए सम्बन्धों को रेखांकित किया है ।"[64] लेखक जब छोटा था तो एक दिन अंग्रेजी फिल्म देखने गया , उसी दिन उसके माँ-बाप एवं बहन भी कथा सुनने के लिए गए और यह निर्णय लिया गया कि जब तक सब नहीं आते नत्थू (नौकर) घर में सोएगा। लेखक फिल्म देखकर जल्दी घर पहुँच गया और दरवाजा खटखटाने लगा , तभी उसके माँ , पिताजी और बहन भी आ गये , काफी खटखटाने पर जब दरवाजा खुला तो लेखक ने जोर से थप्पड़ नौकर को दे मारा। नौकर कुछ न बोला और वर्षो तक वहीं काम करता रहा ।

लेखक जब बड़ा हो गया तो उसकी जगह उसके बेटे रमेश ने ले ली। जो घटना लेखक के लड़कपन में घटी थी, वैसी ही घटना उसके पुत्र रमेश के साथ घटी । लेखक ने जो नौकर अब रखा था उसका नाम भी नत्थू था। एक दिन देर से दरवाजा खोलने पर रमेश ने जैसे ही नत्थू को थप्पड़ मारने के लिए हाथ उठाया, नौकर ने हाथ पकड़ लिया और कहा ' सँभल के बाबू ' लेखक ने जब यह देखा तो उसने नौकर को तभी निकल जाने को कहा।नौकर नत्थू ने जब एक महिने का एड़वांस और तन्खा माँगी तो उसे पुलिस की धमकी दी गई । नत्थू चला तो गया परन्तु अपनी बकाया राशि को पाने के लिए 'नौकर यूनियन' का सहारा लेता है ।

'संभल के बाबू' कहानी में निरूपित चेतना -

भीष्म साहनी ने अपनी कहानी 'संभल के बाबू' में गृहस्वामी और

घरेलू नौकर के सम्बन्धों को चित्रित किया है । आज से वर्षों पहले नौकरों का समाज में कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं था। वह अपने मालिकों के बंधुआ नौकर हुआ करते थे। गाली, मार,अपमान आदि सहकर भी मालिक की ही चौखट पर सिर रखकर पड़े रहते थे। लेकिन आज पाश्चात्य देशों के प्रभाव के कारण इनकी मान्यताओं मे परिवर्तन हो रहा है। यह अपने अधिकारों के प्रति जागृत होते हुए दिखाई दे रहे हैं ।

लेखक ने अपने बचपन में जब नौकर को थप्पड़ मारा तो नौकर कुछ नहीं बोला और वर्षों तक उसने उनके यहाँ नौकरी की , परन्तु जब लेखक का पुत्र रमेश नये नौकर नत्थू को थप्पड़ मारता है तो वह पहले नौकर की तरह चुप नहीं रहा, बल्कि उसका हाथ पकड़ लेता है।निकाले जाने पर एक महिने का एडवान्स तथा महिने की तन्खाह माँगता है, नहीं मिलने पर चुप नहीं रहता बल्कि नौकर युनियन का सहारा लेता है ।

आज के इस आधुनिक युग में घरेलू नौकर के दृष्टिकोण में बदलाव दिखाई देता है । प्राचीन पीढी का नौकर नत्थू अपने स्वामी की मार,गाली,अन्याय और शोषण के हरेक जुल्म को चुपचाप सह लेता था। लेकिन नई पीढ़ी का नत्थू अपने स्वाभिमान और आत्मसम्मान की रक्षा करते हुए मालिक की सेवा करता है । लेखक ने यह बताने का यत्न किया है कि घरेलू नौकर भी अब अपने अधिकारों के प्रति सजग है। वह गृहस्वामी के अत्याचारों, अन्याय और अपमान के आगे घुटने नहीं टेकता है बल्कि अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए नौकर युनियन का सहारा लेता है।

(iv)'युद्ध'- सतीश जमाली

सतीश जमाली जी ने अपनी 'युद्ध' कहानी में मजदूरों की संगठित हो रही शक्ति का परिचय दिया है । मौजीराम जो किसी फैक्ट्री में वेल्ड़र हैं आज उसकी और उसके हेल्पर की मजदूरी में कटौती कर दी जाती है । उन्हें ड़राया, धमकाया भी जाता है। निर्बल हेल्पर घटी दर में मजदूरी करने को तैयार हो जाता है।मौजीराम नहीं ड़रता और अपनी मजदूर युनियन के सदस्यों से मिल बात करता है। लेकिन,देखता है कि बीस दिन गुजर जाने पर भी युनियन ने कोई कार्यवाही नहीं की , क्योंकि यह युनियन मालिक की ही है , ऊपर से भले ही मालिक के खिलाफ हो परन्तु अन्दर से मालिक के फायदे की बात ही सोचती है । मौजीराम यह देखकर दूसरी युनियन का सदस्य बन जाता है जो संख्या में अधिक नहीं है। मौजीराम के पक्ष में सभी मजदूर लड़ने के लिए तैयार हैं । वृजबली कहता है" आखिरकार कब तक हम चुप बैठे रहेंगे। अब समय है कि हम अपने आप को दाँव पर लगा दें। हम हार गए तो सबकी छंटनी हो जाएगी, परवाह नहीं बड़े कामों के लिए कुर्बानियाँ भी देनी पडती हैं।'[65]हड़ताल

होने पर और कई मजदूर इस युनियन के साथ जुड़ जाते है। फैक्ट्री के मालिक उन सारे हथकंड़ो को अपनाते है जिससे मजदूरों की एकता को तोड़ा या कुचला जा सकें। परन्तु मजदूरों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अर्थ के अभाव के कारण बच्चो की स्थिति भूख के कारण दयनीय होती जाती है। मौजीराम सोचता है कि उसी के कारण सभी के बीवी-बच्चे भूखे हैं। वह दूसरे शहर में जाकर जिविका कमाने की बात सोचता है पर उसे लगता है कि इस तरह मजदूरो के साथ विश्वासघात होगा । वह अपने विचारों में खोया हुआ ही होता है कि तभी मालिक की कार आती हुई नजर आती है। मौजीराम की रगों में खून खौल उठता है। "मौजीराम के पिछले विचार न जाने कहाँ छूट जाते है और एक ही शब्द उसके मुँह से निकलता है युद्ध। "[66]

'युद्ध' कहानी में निरूपित चेतना -

मिल मालिक आर्थिक लाभ के लिए ही मजदूरों का शोषण करता है। अधिकारों और हितो की टकराहट से पारस्परिक संघर्ष का जन्म होता है।मौजीराम की मजदूरी में जब कटौती कर दी जाती है तो वह कम दर पर काम करने से साफ इन्कार कर देता है। वह मालिक से अनुरोध करता है कि उसे उसका सही मूल्य दिया जाये परन्तु उसकी एक नहीं सुनी जाती और उसे नौकरी से निकाल दिया जाता है। मौजीराम अपने अधिकार के लिए मजदूर युनियन का सहारा लेता है। हड़ताल होने पर कई और मजदूर युनियन के सदस्य बन अन्याय और शोषण का विरोध करते हैं। मालिक बढ़ती हुई शक्ति को देख वह सारे हथकण्ड़े अपनाता है जिससे की मजदूर युनियन को तोड़ा जा सकें। परन्तु मजदूर टस से मस नहीं होते और एक दिन मालिक पर हमला कर देते हैं ।

पाश्चात्य देशों के कारण ही मजदूरो में चेतना का संचार हुआ है।आज मजदूर अपनी मेहनत, परिश्रम के श्रम को प्राप्त करने के लिए निर्भय होकर मालिक का मुकाबला करता है। यदि फिर भी उसे उसका हक नहीं मिलता है तो वह मज़दूर युनियन का सहारा लेता है। आज मजदूर अपने अधिकार और दायित्वों के प्रति सजग हो चुका है।अब वह स्वंय अपने हित-अहित को पहचानने लगा है।ऐसी परिस्थितियों में पूंजीवादी व्यवस्था अधिक काल तक जीवित नहीं रह सकेगी क्योकि आज प्रत्येक श्रमिक जन-धन के समुचित वितरण का अभिलाषी है।मालिक और मजदूर के भेद-भाव के कारण ही देश के आर्थिक विकास में उतनी प्रगति नहीं हुई जितनी होनी चाहिए थी। राष्ट्रीय विकास के लिए यह आवश्यक हैं कि इस भेद-भाव की भावना को त्याग दिया जाए।

उपर्युक्त चार कहानियों के अंतर्गत सामाज के आर्थिक रूप से पिछडे वर्ग

के लोगों की दयनिय स्थिति, उनकी आर्थिक दरिद्रता के सामाजिक-आर्थिक पहेलू और स्वतंत्रता के पश्चात जनतांत्रिक वैधानिक परिस्थितियों के परिणामस्वरूप उनमें आ रही जागरूकता (जो उन्हें इस राष्ट्र का नागरिक होने की अनुभूति करवाता हैं) आदि से सम्बन्धित कथावस्तुओं में समस्या के विभिन्न पहलूओं पर विचार किया जाता है --

'हरिजन सेवक' कहानी वर्ग - संघर्ष की स्थिति को चित्रित करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में गरीब मजदूर सादियों से उच्चवर्गीय लोगों के यहाँ अल्प वेतन और नगण्य सुविधा के साथ काम करता था।स्वतंत्रता के पश्चात शिक्षा के प्रचार-प्रसार तथा सरकारी नीतियों एवं योजनाओं के तहत श्रमिक वर्ग अपने अधिकारों को जान पाया। उसमें अब स्वाभिमान,आत्मनिर्भरता और अपने अधिकारों की जागरूकता पैदा होने लगी है । अब वह आत्यचारों के खिलाफ निर्भय होकर आवाज उठा रहा है । गाँव का निम्न वर्ग मास्टर साहब से शिक्षा ग्रहण कर जब अपने अधिकारों के लिए उचित माँग करते हैं तो पूँजीपति वर्ग सत्ता से मिलकर उन्हें समाजविरोधी और सत्ताविरोधी घोषित करवा देते हैं। अपने अधिकारों की लडाई में यह वर्ग अपने ही हाथों पिस जाता है।लेखक के कहने का तात्पर्य यह है कि "आर्थिक समानता के उदेश्य को लेकर चलने वाले आज के जनतंत्र में निर्धन ,गरीब का पक्षधर कोई नहीं हैं।" [67]आज भी यह वर्ग जमींदारों के जुल्म का शिकार बना हुआ है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि उक्त कहानी के अतिरिक्त पूर्व वर्णित रामदरश मिश्र द्वारा लिखित 'इज्जत' कहानी में भी श्रमिक वर्ग अपने उचित वेतन और अन्याय के खिलाफ संगंठित होकर आवाज उठाता है।

'माया,माटी और मानव' कहानी में राजेन्द्र अवस्थी जी ने गाँव की जमींदारी के कुछ उज्जवल पक्ष को उद्घाटित किया है । अधिकांशत: समाज का यह सम्पन्न वर्ग, पिछड़े वर्ग के लोगों की दरिद्रता के कारण रहे हैं । अभावग्रस्त जीवन का अभिशाप जमींदारों की कठोर सामाजिक-आर्थिक नीतियों का परिणाम रही है । लेखक के मतानुसार मरूभूमि में भी कुछ ऐसे दया-प्रेम के स्त्रोत थे जो मानवीय मूल्यों से कठोरता, निर्दयता के कलंक से बचा रखते थे। जमींदार शम्भूसिंह की माता इसका जीता जागता उदाहरण है ।

शम्भूसिंह माता के स्वर्गवास के पश्चात जमींदारी सम्भालता है।वह आधुनिक यंत्रो और मशीनों का प्रयोग कर श्रमिकों को अपने यहाँ से निकाल देता है । स्वतन्त्रता के पश्चात् पुत्र की मृत्यु और जमींदारी प्रथा के समाप्त होने पर स्वंय को अकेला पाता है। लेखक ने यह बताना चाहा है कि आज के इस यांत्रिक युग में मनुष्य पारस्परिक निर्भरता के स्थान पर यांत्रिक निर्भरता को स्वीकार करके एक दूसरे से कट रहा है ।

ग्रामीण मजदूरों की समस्या के अतिरिक्त 'युद्ध'और 'संभल के बाबू' कहानी में फैक्टरी मजदूरों और घरेलू नौकर की समस्याओं को प्रस्तुत किया है ।

'युद्ध' कहानी संघर्ष की अनिवार्यता को चित्रित करने वाली है । ब्राह्म युद्ध के विनाशकारी परिणाम की तरह सामाजिक-आर्थिक संघर्ष देश की समृद्धि और विकास पर करारा प्रहार करती है। इस कहानी में मिलमालिक और मिल-मजदूरों के संघर्ष को उद्घाटित किया गया है। मिल-मालिक अपनी सत्ता के बल पर मौजीराम और उसके हेल्पर के वेतन में कटौती करता है। मौजीराम कम वेतन पर काम करने को तैयार नहीं है वह मजदूर युनियन का सहारा लेकर अपने अधिकारो की माँग करता है । मजदूर वर्ग संगठित होकर अन्याय के खिलाफ आवाज उठाता है । दूसरी तरफ मालिक शाम, दाम, दंड़, भेद से युनियन को खरीदना चाहता है परन्तु मजदूरों की बढ़ती हुई संगठित शक्ति को तोड़ नहीं पाता । इस प्रकार शहरीं मजदूरों को अपनी अस्मिता और अपने अधिकारों के लिए जागरूक और प्रयत्नशील दिखाया है ।

'संभल के बाबू' कहानी आधुनिक युग में बदलते हुए सामाजिक पारिवारिक परिवेश तथा मानवीय मूल्य से सम्बन्धित है । अब तक घरेलू नौकर परिवार का एक अभिन्न अंग होता था । वह पीढ़ी दर पीढ़ी जी-जान से अपने मालिकों की सेवा करता था । मालिक भी उनके प्रति सद्भावपूर्ण व्यवहार रखता था । कभी मालिक से ऊँची आवाज में कटु बात कही जाती तो सेवक उदारता से मालिक को माँफ कर देता था। आज के इस आधुनिक युग में जीवन के हर क्षेत्र में परिवर्तन आया है, तब घरेलू नौकर भी पीछे क्यों रहें ? भीष्म साहनी जी ने इस कहानी में गृहस्वामी एवं घरेलू नौकर के आपसी सम्बन्धों और उनमें आये परिवतन पर प्रकाश डाला है ।

पहली पीढ़ी का नौकर नत्थू मार खाकर और अपमान सहते हुए भी मालिक की वर्षों तक गुलामी करता है।लेकिन आधुनिक पीढ़ी का नत्थू अपने अधिकारों के प्रति सचेत हैं । वह अपने अधिकारों को भली-भाँति जानता है, इसलिए अपने ऊपर उठाये जाने वाले हाथ को पकड़ लेता है । अपने अधिकार की धन राशि को पाने के लिए नौकर युनियन का सहारा लेता है । इस प्रकार नये युग के प्रभाव से समाज का यह आर्थिक रूप से पिछड़ा हुआ वर्ग, जो शहर में रहकर भी अन्याय और अत्याचारों का शिकार होता था , अब अपने अधिकारों के जतन के लिए सक्षम बन गया है । इस प्रकार व्यक्तिगत संघर्ष के क्षेत्र में भी समाज का यह आर्थिक-सामाजिक अवदशा को प्राप्त वर्ग भी अपने स्वाभिमान , आत्म-सम्मान और अधिकारों के प्रति जागरूक होकर अपना भाग्य खुद बदल रहा है ।

निष्कर्ष रूप में उक्त हिन्दी कहानियों के आधार पर स्वीकार करना

होगा कि स्वातन्त्रोत्तर भारत में 'अर्थ' को लेकर वर्ग भावना की खाई दिनों दिन बढ़ती जा रही है । अमीर व गरीब का अन्तर कम होने की अपेक्षा दिनों दिन बढ़ रहा है। जमींदारों के स्थान पर अब आधुनिक ज़मींदारो का उदय हुआ है । मालिक और मजदूर के सम्बन्धों में कटुता एवं संघर्ष पर्याप्त मात्रा में बढ़ गये हैं।भारत में जाति एवं वर्ण व्यवस्था अब शनैः शनैः वर्ग व्यवस्था में बदल रही है।इसके साथ ही समाज का यह वर्ग जो आर्थिक अभावों से जीवन पर्यन्त संघर्षरत रहता है, अब अपने अधिकारों और न्याय-प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील है।इन कहानियों के माध्यम से देश की आर्थिक स्थिति का यथार्थ संवेदनात्मक चित्रण पाया जाता है ।

ख) शिक्षा के क्षेत्र में भ्रष्टाचार -

शिक्षा का क्षेत्र मानव जीवन को सुसंस्कृत बनाने में एक अहम् भूमिका निभाता है । मनुष्य का जीवन अपनी भौतिक-अस्मिता की पहचान मात्र नहीं है । वह अपने बौद्धिक विकास द्वारा न सिर्फ अपनी अपितु समस्त मानव-समाज के लिए कल्याणकारी कार्य कर सकता है । राग-द्वेष, लोभ, मोह जैसे मानव-मन के दुर्गुणों को दूर करके मनुष्य को पशु से ऊपर उठाने में शिक्षा से प्राप्त ज्ञान ही वरदान सिद्ध होता है। एक प्रकार से कहा जाय तो मानव जीवन का स्तंभ ज्ञान है। लेकिन आधुनिक युग में भौतिक जीवन के प्रति भोगवादी दृष्टिकोण के कारण मनुष्य ने शिक्षा-संस्थानों को भी आर्थिक व्यापार का एक साधन बना लिया है । शिक्षा का लक्ष्य आर्थोपाजन की योग्यता प्रदान करने तक सिमट गया है । अतः आज की शिक्षा न मनुष्य को सुसंस्कृत बना पाती है न ऐसे शिक्षक या संस्थान देश और समाज के लिए कल्याणकारी बनपाते हैं। शिक्षा का अर्थ अपनी गरिमा खो चुका है।शिक्षा के प्रचार द्वारा सरकार ने भी अक्षर ज्ञान और वस्तु ज्ञान को बढ़ावा दिया , लेकिन मानव समाज को सांस्कृतिक अस्मिता प्रदान न कर सकी। यही कारण है कि आज देश में अनेक सरकारी, बिन-सरकारी स्कूल,कॉलेज और विश्वविद्यालयों की संख्या में वृद्धि हुई है लेकिन सुसंस्कृत मनुष्यों की संख्या अति अल्प हो गयी है। शिक्षा के स्तर में आयी गिरावट की जिम्मेदार एक ओर यदि सरकार है तो दूसरी ओर समाज का आधुनिक भावबोध तथा अर्थ की महत्ता है ।

(i) लाश - सुभाष पन्त

सुभाष पन्त कृत 'लाश' एक सामाजिक कहानी है । इस कहानी में लेखक ने एक मास्टर पर हुए अत्याचार को व्यक्त किया है। मास्टर जी, जो पुरी निष्ठा

और लगन के साथ नौकरी करते हैं परन्तु कई महिनों से उन्हें वेतन नहीं मिला । उन्हें विश्वास है कि वेतन अवश्य मिल जाएगा और इसी विश्वास पर लाला के यहाँ से उधार सामान लेते रहते हैं।मास्टर जी मैनेजमेंट को बराबर पत्र लिखकर वेतन के लिए कहते रहे, परन्तु कोई जवाब नहीं मिलता। एक दिन लाला भी उधार देना बन्द कर देता है। पत्नी सलाह देते हुए कहती है कि"आगे रसकार भी है उसे क्यों नहीं लिखते ? अपनी मेहनत की कमाई है , कोई खैरात तो माँग नहीं रहे हो ।"[68] मास्टर जी पत्नी पर नाराज हो,जाते हैं और कहते हैं कि"पानी में रहकर मगरमच्छ से बैर नहीं लिया जा सकता। "[69] परन्तु बच्चों को जब भूखा देखते हैं तो उनका धैर्य जवाब देने लगता है। वे स्वंय चेयरमैन से मिलने चल देते हैं। वहाँ पहुँचने पर देखते हैं कि मिटिंग चल रही है,काफी समय तक बाहर इन्तजार करते हैं। मिटिंग खत्म होते ही चेयरमैन के समक्ष प्रस्तुत होते हैं,और अपनी वेतन सम्बन्धी परेशानी को बताते हैं। इस पर चेयरमैन कहतें हैं कि आपके खिलाफ कुछ आरोप हैं जब तक उनका स्पष्टीकरण नहीं हो जाता तब तक आपको वेतन नहीं मिल सकता। झूठे आरोप की बात सुनकर मास्टर जी गुस्से से चीख उठते हैं "आप एक गरीब स्कूल मास्टर की रोजी-रोटी छिनना चाहते हैं।पहले ही आप तीन सौ रूपयों पर दस्तखत कराकर केवल ड़ेढ़ सौ रूपये देते हैं-यह शोषण है।"[70]

मास्टर जी को एक धक्का सा लगता है। दरवाजे से बाहर निकलते ही उन्हें चक्कर आ जाता है।वे ऐसे गिरते हैं कि कभी उठ नहीं पाते।चेयरमैन,जो कुछ समय पहले उन पर झूठा आरोप लगा रहा था वह मगरमच्छ के आँसू बहाते हुए मास्टर जी को आदर्शवादी मानव कहकर उनका सम्मान करता है ।

'लाश'कहानी में निरूपित चेतना --

सुभाषपंत जी ने अपनी 'लाश' कहानी में शिक्षा के क्षेत्र में फैल रहे भ्रष्टाचार की ओर समाज का ध्यान आकर्षित करना चाहा है।आज स्कूल,कॉलेज आदि भी देश में व्याप्त भ्रष्टाचार का एक अंग है, अध्यापकों को जितना वेतन मिलता है उससे दुगुनी रकम पर दस्तखत करवाया जाता है। आज अनपढ़, अज्ञानी लोग धन के बल पर शिक्षा संस्थाओं के चेयरमैन बन अपना मनमाना कानून चलाते हैं। शिक्षा जैसा पवित्र क्षेत्र आज इन लोगों के कारण गर्त में गिरता चला जा रहा है ।

समाज शिक्षक वर्ग से यह उम्मीद रखता है कि जीवन-मूल्य और मानवीय आदर्श का जीता-जागता वह प्रमाण रहे । लेकिन शिक्षक भी एक सामाजिक प्राणी है।आदर्श,मूल्य और शिक्षा से प्राप्त संस्कारो द्वारा जीवन-संघर्ष में जूझता है,परंतु इसकी भी एक सीमा होती है ।

कहानीकार ने शीर्षक द्वारा एक प्रतिकात्मक प्रश्न प्रस्तुत किया है। लाश किसकी ? एक आदर्श मनुष्य की ? या जीवन मूल्यों को चरितार्थ करने वाले संस्कारों के साकार रूप की ?इसका उत्तर समाज ढूँढ़ने लगेगा तो शायद पतन से अपने आपको बचा पायेगा ।

आज शिक्षा के क्षेत्र में भ्रष्टाचार की समस्या समाज के लिए अभिशाप बनी हुई है। देश के अधिकत्तर विद्यालयों में अध्यापकों को उचित वेतन नहीं दिया जा रहा है,जो समाज को सुसंस्कृत करके देश के भविष्य का निर्माण करता है आज उसकी स्थिति ही चिन्ताजनक है।आज का शिक्षक जीवन के झंझावतों से टकराकर सांस्कृतिक मूल्यों की रक्षा करने का यत्न करता है।लेकिन अकेले संघर्ष करते-करते अब वह टूटने लगा है। ऐसे में समाज का उत्तरदायित्व है कि उनके मूल्यों को पहचाने।

सुभाष पन्त की उक्त कहानी समकालीन शिक्षा जगत की जीर्ण-शीर्ण दशा को व्यक्त करने वाली कहानी है ।

अध्यापक जो समाज को ज्ञान प्रदान करकें मनुष्य के जीवन को खुशहाल बनाने का मार्ग दिखाता है, स्वंय कितने संघर्ष और कष्ट झेलकर अपने और परिवारवालों का पेट पालता है।अर्थ लोभ के इस आधुनिक युग में उसे अपने स्वाभिमान से हाथ धोना पडता है। अर्थाभाव और अपमान के बीच पिसने वाले एक ऐसे ही निरीह अध्यापक की दयनीय दशा को यहाँ चित्रित किया है ।

लेखक ने प्रस्तुत कहानी की कथावस्तु द्वारा शिक्षक के आदर्श जीवन, जीवन-मूल्यों के प्रति उसकी निष्ठा और संस्कारों की रक्षा के लिए समाज के दुर्गुणों से,दूषणों से टकराहट आदि का प्रभावशाली चित्रण किया है । आज के समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार और भोग की महत्ता के परिणाम स्वरूप सांस्कृतिक धरोहर अब नष्ट प्राय होने लगी है । शिक्षक वर्ग आज भी उन मूल्यों की महत्ता को पहचानकर अनैतिक,स्वार्थ और भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ रहा है।परिणाम,उसकी दयनीय दशा और अंततः पराजय से युक्त जीवन का अन्त । क्या यह समाज के लिए गौरवपूर्ण है ? इस प्रकार लेखक ने आर्थिक संकट से नष्ट होती हुई सांस्कृतिक परम्परा के प्रति सावधान करने का यत्न किया है ।

इस प्रकार लेखक ने शिक्षा जगत में फैले आर्थिक भ्रष्टाचार और उसके परिणाम स्वरूप शिक्षकों की दयनीय परिस्थिति का चित्रण किया है। आज देश की अधिकत्तर शिक्षा संस्थाओं में चेयरमैन और मैनेजमैन्ट मिलकर शिक्षा के पवित्र क्षेत्र को भ्रष्ट कर रहे हैं, जो देश और समाज के लिए चिन्ता का विषय है। शिक्षा संस्थान देश की भावी पीढ़ी को अच्छे नागरिक बनानें मे कितने कारगत सिद्ध हो सकते है,

इसका सही अंदाज हमें प्रस्तुत कहानी में निरूपित तथ्य से स्पष्ट होता है ।

ग) बेरोजगारी एवं बाल मजदूरी की समस्या -

किसी भी देश की उन्नति और समाज के विकास में उस देश की पीढ़ी के युवा वर्ग का महत्वपूर्ण योगदान रहता है । इस नयी पीढ़ी के मन में कुछ कर गुजरने की तमन्ना रहती हैं, लेकिन उनके ज्ञान,शक्ति और उत्साह के अनुरूप उन्हें जब कार्य-क्षेत्र न मिले तो वह उदासीनता और हताशा के दलदल में धँस जाता हैं।ऐसा निराश युवा-धन देश के लिए अभिशाप सिद्ध होता है ।

आज समस्त विश्व में आर्थिक संकट और उससे जुड़कर बेरोजगारी की समस्या फैली है। लेकिन भारत जैसे नवविकसित देश के लिए यह अत्यन्त विकट समस्या बन गई है। गुलामी की अवस्था में अंग्रेजो की कूट आर्थिक नीति के परिणाम स्वरूप देश में जो आर्थिक संकट के बादल छाये थे वे स्वतंत्रता के पचास साल के बाद भी छँट नहीं पाये। इसके अनेक कारण है उन सब पर यहाँ विचार करना असंगत होगा। लेकिन देश की आर्थिक दुर्दशा से विचलित होने वाले विद्वानों के लिए युवा वर्ग की बेरोजगारी एक चिन्ता का विषय बनी हुई है।

देश की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा वर्ग बेकारी की अवस्था में जीने वाले लोगों का है।इनमें भी मुख्यत:दो प्रकार के बेरोजगार दिखाई देते है।एक अशिक्षित युवा वर्ग और दूसरा शिक्षित वर्ग। आधुनिक युग में बड़ी तेजी से हो रहे वैज्ञानिक आविष्कार और मशीनों के उत्पादन से छोटे-बड़े लधु उद्योग और कुटिर उद्योग नष्ट प्राय हो गये है।जिसके परिणाम स्वरूप अशिक्षित बेरोजगारी की संख्या में दिन प्रतिदिन वृद्धि हो रही है।बेरोज़गारी के विकास का एक कारण भारत में तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या भी है। दूसरी ओर विश्वविद्यालयों से उपाधियाँ लेकर दर-दर भटकने वाला शिक्षित बेकार तेजी से बदलते हुए देश-विदेश के बाजारो के स्वरूप,देश की सामाजिक -आर्थिक व्यवस्था,इलेक्ट्रौनीक मशीने,सरकारी नीतियाँ आदि के परिणाम स्वरूप शिक्षित युवा वर्ग भी रोज़गार की तलाश में सड़को पर भटकता हैं। उसे जब एक लम्बे अरसे तक नौकरी या उचित कार्यक्षेत्र नहीं मिल पाता तब वह हताश-निराश होता है परिणाम स्वरूप गलत रास्ते पर चलकर कई बार देश और समाज के लिए विकट प्रश्न बन जाता है। साहित्यकार यद्यपि कोई राजनीतिक, सामाजिक या आर्थिक व्यवस्थापक नहीं है फिर भी मानव-मन की पीड़ा से व्यथित होकर भविष्य के लिए चिंतित हो उठता है। अत: अपनी रचना के माध्यम से देशव्यापी ऐसी समस्या को उजागर करने का यत्न करता है ।

बेरोजगारी की समस्या समाज के लिए एक बोझ ही नही बल्कि

अभिशाप भी है।बेरोजगारी के कारण ही समाज में लूट-खसोट,चोरी-चकारी, हेरा-फेरी, तस्करी आदि का वातावरण फैलता है। आत्म ग्लानि और आत्महीनता के भावों से भरा यह बेकार शिक्षित वर्ग समाज में भी निराशा और असन्तोष का जहर घोलता है।अतएव जब तक देश के सभी नागरिकों को उनकी योग्यता एवं शिक्षा के अनुसार काम नहीं मिलेगा तब तक स्वस्थ व सुखी समाज एवं राष्ट्र का निर्माण असम्भव है ।

बेरोजगारी की समस्या देश के युवा-वर्ग तक ही सीमित नहीं है । इसके साथ जीवन-रेखा से नीचे जीने वाले 'अल्प आयवाले गरीब परिवार में आर्थिक संकट से जूझने वाले बाल मज़दूरों की भी है। अत: बाल मज़दूरों की समस्या पर विचार करना भी आवश्यक है ।

यह समस्या समाज़ के उस वर्ग के साथ विशेष रूप से जुड़ी हुई है , जो जीवन भर आर्थिक अभाव को झेलते है । समाज का निम्नवर्गीय गरीब इन्सान अपनी कम आय के कारण बड़े परिवार का निर्वाह करने में असमर्थ होता है। अत: ऐसे परिवार के बच्चे भी आजीविका की तलाश में दर-दर भटकने लगते हैं। ज़मींदारी प्रथा के कारण भी गरीब किसान, ज़मींदार या साहूकारों से उधार लिए गये पैसों को वापिस चुकाने में असमर्थ होता था तो वह मज़दूरी का बोझ अपनी संतान पर भी लाद देता था सदियों से भारतीय समाज में निर्धन बच्चों की ऐसी दयनीय स्थिति बनी रही है। आज के वैज्ञानिक युग में भी आर्थिक लाभ या अर्थ के स्वार्थ में अन्ध , समाज में कई सम्पन्न मनुष्य ऐसे हैं जो निर्धन बच्चों की असहाय परिस्थितियों का भरपूर लाभ उठाते हैं।इस प्रकार बाल मजदूरी की समस्या समाज की आर्थिक विषमता से उत्पन्न समस्या कही जा सकती हैं। लेकिन आज इसका एक मनोवैज्ञानिक पहलू भी उभरकर सामने आया है। परिवार में आपसी सम्बन्धों में कटुता,फेशन-परस्त आधुनिकता की चमकीली-चकाचौंध और बच्चों के प्रति माँ-बाप की उपेक्षा भी आज के युग में बच्चो को घर से दूर निकलकर मज़दूरी के लिए मजबूर करती है। बच्चों की स्वप्नों की दुनिया तो स्वर्ण सी चमकीली होती है लेकिन सिर से घर या माँ-बाप का साया दूर हो जाने पर पेट की आग उन्हें बाल मज़दूर बनने पर मजबूर करती है । बीड़ी-उद्योग , काँच-उद्योग, पत्थर का उद्योग, ताला उद्योग जैसे छोटे-मोटे लघु और कुटिर उद्योगों में कम मज़दूरी पर ऐसे बालको से काम करवाया जाता है । मालिक कम वेतन पर बच्चों से अधिक से अधिक परिश्रम कराते हैं । इसके अतिरिक्त टी स्टाल, बूट पॉलिश, समाचार पत्र का वितरण, रेल्वे प्लेट फार्म पर बोझा ढोने या गाड़ियाँ साफ करने तथा घरेलू नौकरों के रूप में भी छोटी अवस्था में लड़के-लड़कियों को मज़दूरी पर रखा जाता है । वास्तव में बालकों से इस प्रकार का काम करवाना गैर कानूनी तो है ही , साथ ही मानवीय

अधिकार के विरूद्ध है। जिस अवस्था में उसे अपने शारीरिक,मानसिक और भावात्मक विकास के लिए योग्य अवसर और परिस्थितियाँ उपलब्ध होनी चाहिए उस उम्र में वे समाज का बोझ अपने नाजूक हाथों और कन्धों पर उठाते हैं।जिस उम्र में माँ के आँचल में उसे ममता का नाजुक स्पर्श प्राप्त करना है, उस उम्र में वह मालिकों की गालियाँ और मार खाता है । आगे चलकर स्वास्थ्य, शिक्षा और सामाजिक स्वमान के अभाव में वह चोरी, तस्करी, जुआ, दारू आदि की संगत मे पड़कर समाज का सड़ा-गला अंग बन जाता है । अत: केवल हमारे देश में ही नहीं लेकिन समस्त विश्व में बालकों के अधिकार की सुरक्षा का अभियान चलाया जा रहा है । कहानी-साहित्य में इस समस्या का बड़ा मार्मिक निरूपण किया गया है।

बेरोजगारी एवं बालमज़दूरी की समस्या से सम्बन्धित कहानियाँ निम्नलिखित हैं -'आक्रोश' (प्रीति श्री) , 'बच्चे' (सतीश जमाली)

(i) आक्रोश - प्रीति श्री

प्रीति श्री ने अपनी कहानी 'आक्रोश'में आरक्षण से उत्पन्न बेरोजगारी की समस्या को चित्रित किया है।कहानी के प्रारम्भ में हजारों छात्र आरक्षण विरोधी नारे लगा रहे हैं। पुलिस छात्रों को काबू में करने के लिए अश्रु गैस का प्रयोग कर रही है। पुलिस के डी.ई.जी. खन्ना साहब का ड्राइवर सोचता है कि अर्थशास्त्र और संस्कृति में एम. ए. करने के बाद भी वह खन्ना साहब का निजी ड्राइवर ही है। उसके अनुसार "सरकार की यह नीति वोट बटोरने की है।" [71]

रवि सभी छात्रों को सम्बोधित करते हुए कहता है कि हम छात्र पीछे नहीं हटेगें, आन्दोलन को तीव्र करेंगे परन्तु तोड़-फोड़ नहीं करेंगे, राष्ट्र की सम्पत्ति को नुकसान नहीं पहुचाँएगें। लाठी चार्ज होता है अनेक छात्रों को बन्दी बना लिया जाता है उनमें डी.ई.जी. खन्ना साहब की लड़की नीरा भी होती है । रिहा होकर जब रवि घर पहुँचता है तो उसके पिता जी और माता जी बहुत गुस्से होते है तब वह कहता है कि "आरक्षण हमारे अकेले का तो प्रश्न नहीं है न अम्मा?"[72]प्रोफेसर धर्मपाल प्रो.सादिक से कहते है कि आरक्षण होना चाहिए परन्तु सबसे पहले शिक्षा को घर-घर पहुँचाना होगा। नहीं तो इन्हे आरक्षण का लाभ कहाँ होगा । केवल थोडे से वर्ग को ही लाभ मिलता रहेगा। छात्रों का आक्रोश बढ़ता जाता है पुलिस फाइरिंग में राकेश की मृत्यु हो जाती है।खन्ना साहब का तबादला हो जाता है नीरा भी चली जाती है।रवि,बाबूजी की बीमारी मुनिया का विवाह, माँ की उदास सासों को देख नौकरी के लिए निकल पड़ता है परंतु बिना जान-पहचान के उसे नौकरी नहीं मिलती। एक दिन उसकी मुलाकात अपने दोस्त

सुबोध से होती है जो गैरकानूनी काम करता है। रवि को भी शामिल होने के लिए कहता है। परन्तु रवि की मुलाकात उसी दौरान नीरा से होती है वह रवि की दयनीय स्थिति को देख उसे अपनी सहेली के पिता की फैक्ट्ररी में नौकरी दिलवाने का आश्वासन देती है। वह दोनो जा ही रहे थे कि तभी छात्रों के जुलूस को देखते हैं नीरा कहती है"रवि आन्दोलन अपने लक्ष्य की प्राप्ति में जीवित रहते हैं । अधिकार के पक्ष में पीढीगत चलते रहते हैं । हम हारे नहीं, रवि ! हमारी जीत मशाल की चमकदार लौ में कायम है ।"[73] और दोनों भी शामिल हो जाते हैं ।

'आक्रोश' कहानी में निरूपित चेतना -

'आक्रोश ' कहानी में लेखिका ने बताया है कि आरक्षण कानून के लागू हो जाने के कारण बेरोजगारी की भीषण समस्या उपस्थित हो रही है । इतना ही नहीं कई छात्र रोजगार न मिलने के कारण गलत रास्तो पर चल धन अर्जित करने लगते हैं । यह अतिआवश्यक है कि इस निम्नवर्ग को समाज की मुख्य धारा के साथ जोडा जाए,परन्तु सबसे पहले इनमें शिक्षा प्रचार करना होगा तभी यह अपने अधिकारों को समझ सकेगें। तभी तो प्रोफेसर धर्मपाल, प्रोफेसर सादिक से कहते हैं कि सबसे पहले इनमें मुफ्त शिक्षा का प्रचार करना होगा ।

आज आरक्षण होने के बावजूद भी कुछ ही लोग इसका बार-बार लाभ उठा पाते हैं। इसका मुख्य कारण है कि इस वर्ग के अधिकतर लोग अशिक्षित हैं दूसरा यह की वह अपने अधिकारों से भी अनभिज्ञ है ।

प्रस्तुत कहानी में रवि और उसके साथी इस आरक्षण विरोधी आंदोलन को कई दिनों तक जारी रखते हैं परन्तु घर की परिस्थितियों को ध्यान में रख नौकरी के लिए निकल पडते हैं।रवि के होशियार होने के बावजूद भी उसे नौकरी नहीं मिलती क्योंकि उसके पास सिफारिश नहीं है वह हताश हो जाता है । उसकी मुलाकात अपने मित्र से होती है जो नौकरी न मिलने के कारण गैरकानूनी काम करने लगा है। वह रवि को भी अपने साथ जुड़ने के लिए कहता है । आखिरकार नीरा की सिफारिश से ही रवि को नौकरी मिलने की आशा दिखाई देती है ।

आज इस आरक्षण कानून के कारण योग्य विद्यार्थी को उसकी योग्यता का फल नहीं मिलता। इस कारण आज अधिकत्तर लोग गलत कार्य कर धन अर्जित कर रहे हैं। दूसरा, भाई-भतीजावाद और सिफारिश के कारण बेरोजगारी जैसे भयानक समस्या का विकास दिन-प्रतिदिन विराट रूप धारण कर रहा है ।

(ii) 'बच्चे'- सतीश जमाली

सतीश जमाली की कहानी 'बच्चे' श्रमिक बच्चों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करती है। बिल्लू को आज उसके मालिक गुरू ने नौकरी से निकाल काले नाम के लड़के को नौकरी पर रख लिया है । बिल्लू का कसूर केवल इतना ही था कि जब वह पिक्चर हॉल में पापड़ बेचने के लिए अन्दर जा रहा होता है कि तब एक आदमी के टकरा जाने से सारे पापड़ नीचे गिर जाते हैं और कई लोग उनके ऊपर से गुजर जाते हैं । मालिक यह देख बिल्लू को खूब मारता-पिटता एवं गालियाँ देता है। बिल्लू जबकि कहता भी है कि तन्खा में से काट लेना, परन्तु गुरू बिल्लू की एक नहीं सुनता और उसे नौकरी पर से निकाल देता है । वहाँ खड़े हुए इतने दुकानदारों में से कोई भी गुरू से यह नहीं कहता कि मत मारो इसे बल्कि वह सब उसे पिटता देखकर हँसते हैं । बिल्लू सोचता है कि यह सब मालिक एक जैसे होते हैं ।

बिल्लू काफी देर वहाँ बैठा रहता है और सोचता है कि कहाँ जाये, बचपन से ही वह गुरू के लिए काम करता रहा है। गुरू उसे वहाँ बैठा देख और भी गालियाँ देता हुआ वहॉ से चले जाने के लिए कहता है। बिल्लू की हालत को देखकर काले को उससे सहानुभूति हो जाती है।वह गुरू से नजरें बचाकर बिल्लू के पास जाता है और उसे कहता है कि "तू प्यारे की टी-स्टाल पर चला जा। मेरे वहाँ से आने के बाद उसने किसी को नहीं रखा होगा, वहाँ तुझे दस रूपये महिना और दो वक्त खाना मिलेगा।"[74]

बिल्लू वहाँ दूर से गुरू को देखता है तो मन ही मन सोचता है कि उसकी पापड़ों की टोकरी को पलट दूँ और गुरू को कसकर पकड़ उसे लातें लगा दूँ । परन्तु छोटा होने की वजह से वह यह सब कर नहीं पाता और प्यारे के टी-स्टाल की तरफ चल देता है ।

'बच्चे' कहानी में निरूपित चेतना -

लेखक ने इस कहानी में बाल मज़दूर लड़के के रूप में निम्नवर्ग के ऐसे बच्चों का चरित्रांकन किया है जिन्हें जीवन संग्राम में समय से बहुत पहले ही उतरना पड़ जाता है । मनुष्य को पशुत्व की कोटी तक पहुँचाने वाली बाल मज़दूरी समाज की ही देन है । इस प्रथा के अन्तर्गत मानव , मानव न रहकर मूक पशु बन जाता है वह मार खाकर भी अपने स्वामी की सेवा करता रहता है । बिल्लू को आज उसका मालिक नौकरी से निकाल देता है। बिल्लू ने बहुत छोटी उम्र से ही मालिक के लिए काम करना शुरू किया था वह अब मालिक का दास हो चुका था। बिल्लू मार, गालियाँ खाकर भी मालिक की सेवा करता है लेकिन मालिक उसकी वर्षो की सेवा को

भूला अपने आर्थिक लाभ को ध्यान में रख उसे निकाल काले को रख लेता है ।

बिल्लू की हालत को देख बाल मज़दूर काले को उससे सहानुभूति हो उठती है इसलिए वह बिल्लू को अपने पुराने मालिक के पास जाने को कहता है।

आज स्वतन्त्रता के इतने वर्षो बाद भी सरकार बच्चों को सम्पूर्ण अधिकार नहीं दे पायी है । आज भी देश में इन बच्चों का शोषण हो रहा है । देश के विभिन्न उद्योगो में इन बच्चों से मन-माना काम वसूल कर मालिक अधिक अर्थ लाभ कि प्राप्ति करते है । लेखक ने समाज में फैली हुई बाल-मज़दूरी जैसी कुप्रथा को तथावत् उद्घाटित कर समाज का ध्यान राष्ट्र की इस समस्या की ओर आकर्षित किया है ।

'आक्रोश' कहानी शिक्षित बेरोजगार युवाओं की मानसिकता का चित्रण करती है । लेखिका ने कथा नायक रवि के माध्यम से युवा मन की पीड़ा-व्यथा को निरूपित किया है। आरक्षण की नीतियों के परिणाम स्वरूप शिक्षित युवा वर्ग अपने भविष्य के प्रति चिन्तित हो आन्दोलन एवं हड़ताल करता है। उनके यह विचार है कि नौकरी के लिए आरक्षण नहीं होना चाहिए ।

आरक्षण कानून के लागू होने से शिक्षित युवा वर्ग को नौकरी पाने के लिए दर-दर भटकना पड़ता है। योग्यता होते हुए भी नौकरी नहीं मिल पाती हैं। नौकरियों का अभाव और उनमें भाई-भतीजावाद , सिफारिश आदि के कारण समस्या और भी विकट हो गई है। आज के इस आधुनिक युग में युवा वर्ग इन परिस्थितियों से तंग आकर गैरकानूनी काम भी करने लग पड़ा है। शिक्षित एवं योग्य होने पर भी रवि को नौकरी नहीं मिल पाती। अत: कहानी के अन्त में नीरा उसे नौकरी दिलाने का आश्वासन देकर उसके मन को शान्त करती है ।

लेखिका का यह मानना भी है कि आरक्षण होना चाहिए परन्तु पहले इस पिछड़े वर्ग को शिक्षित करना होगा अन्यथा योग्यता के अभाव में देश और दूसरी तरफ योग्य व्यक्ति नौकरी पाने से वंचित रह जायेगा। जिसके परिणाम स्वरूप असामाजिक तत्वों की संख्या में वृद्धि की सम्भावना बढ़ जाएगी ।

'बच्चे' कहानी में बाल मज़दूर की मनोव्यथा और उसकी पीड़ा को व्यक्त किया है । सतीश जमाली जी ने जहाँ बिल्लू के माध्यम से बाल मज़दूरों की दयनीय दशा को वर्णित किया है वहीं दूसरी ओर उनकी सम्वेदना ऐसे बच्चो के साथ जुड़ी हुई है जो परिवार और समाज के प्रेम से वंचित है।लेखक ने यहाँ यह बताने का यत्न किया है कि आज भी आजादी के इतने वर्षो बाद बाल-मज़दूरी की कुप्रथा ज्यों कि त्यों विद्यमान है। गुरू जैसे स्वार्थी, लालची लोग आज भी बाल-मज़दूरो का प्रयोग कर अर्थ लाभ के लिए इनका शोषण कर रहे हैं ।

देश की आर्थिक परिस्थितियों तथा उससे उत्पन्न समस्याओं से अभिभूत होकर , उसके कतिपय सम्वेदनात्मक पक्षों को उजागर करने वाली उपर्युक्त सात कहानियों के परिचयात्मक विवरण से निम्नलिखित तथ्य सामने आते हैं ---

स्वतंत्रता के पचास वर्षो में देश में खाध-उत्पादन एवं औद्योगिकी उत्पादन क्षेत्र में पर्याप्त विकास हुआ है। परिणामस्वरूप देश आत्म निर्भर होकर विकासशील देशो के समकक्ष आ खडा हुआ है। लोगों के जीवन स्तर भी पहले की तुलना में ऊपर उठे हुए से प्रतीत होते हैं। लेकिन आज भी गरीब वर्ग की आर्थिक स्थिति दयनीय है । सरकारी प्रयत्नों के बावजूद भी उनके जीवन में रोटी,मकान और शिक्षा जैसी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संघर्ष जारी है ।

दूसरे,शहरी एवं ग्रामीण मज़दूर,घरेलू नौकर आदि की मानसिकता में अब नये बदलाव आरंभ हो चुके हैं। वे अपने मालिकों से दबकर, भयभीत होकर जीवन के कष्टों को चुपचाप नहीं सहते हैं । वे अन्याय का विरोध करके अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्षरत रहते हैं । साठोत्तरी कहानियों में इस परिवर्तित स्थिति का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया हैं ।

समाज में सर्वत्र भ्रष्टाचार फैला हुआ है । मनुष्य की भोगवादी प्रवृति बलवती होकर मूल्यहीन हो रही है। चारों ओर अनैतिकता, भ्रष्टाचार, स्वार्थ, लूट, मक्कारी का साम्राज्य फैला हुआ है । लेकिन भारतीय संस्कृति को आज भी सँजोकर रखनेवाला तदनुसार संतोष, त्याग और परिश्रम से जीनेवाला शिक्षक, बड़ा दीन, दुःखी होकर जीवन जी रहा है। देश के सांस्कृतिक पतन का ऐसा मार्मिक एवं प्रतिकात्मक चित्रण करके लेखक ने समाज के सामने लालबत्ती धर दी है ।

समाज में आर्थिक असमानता और उससे उत्पन्न समस्याओं के मूल तक पहुँचने का यत्न 'आक्रोश' और 'बच्चे' जैसी कहानियों में हुआ है।सरकारी तंत्र आर्थिक -सामाजिक सुधार के नाम पर कतिपय ऐसी नीतियों को अपनाता है जो समाज के बहुसंख्यक लोगों के लिए हानिकारक या घातक सिद्ध होती है।सरकार की आरक्षण की नीति के विरोध में छात्रों का आन्दोलन इस बात की चेतावनी देता है कि अयोग्यता के बावजूद आरक्षण देकर सरकार योग्य नवयुवानो के प्रति अन्याय की स्थितियों को जन्म दे रहा है ।

'बच्चे'कहनी भी बड़ी मार्मिक है । घर के आर्थिक संकट से छोटी ही उम्र में काम करनेवाले बालमजदूरों की दयनीय दशा,उन पर हो रहे अत्याचार, शोषण, अपमान , संघर्ष तथा उनकी बेहाली का चित्रण करके लेखक ने समाज के मुँह पर करारा थप्पड़ मारा है । खेल-कूद से जीवन में आनंद प्राप्ति की इस अवस्था में अनाथ

या गरीब बालकों की मज़दूरी का लाभ समाज के अन्य लोग करते हैं यह एक करूण स्थिति है ।

इस प्रकार आर्थिक चेतना से उद्‌बुध सम्वेदनात्मक सूत्रों से बुनी गई प्रस्तुत कहानियाँ देश के निम्नवर्गीय लोगों के आर्थिक जीवन , जीवन-निर्वाह के लिए उठानेवाले कष्ट , मानवीय अधिकार प्राप्ति के लिए किये जाने वाले संघर्ष आदि से सम्बन्धित है। कहानीकार अभावग्रस्त लोगों की दयनीय दशा के साथ-साथ उनमें आ रहे बदलाव तथा अधिकार और न्याय के प्रति उनकी जागरूकता को भी दर्शाता है ।

४) धार्मिक चेतना का स्वरूप :--

धर्म भारत की सनातन संस्कृति का प्राण है । 'धर्म इति धार्यते' अर्थात जीव मात्र को धारण करने वाला धर्म है । मनुष्य के शारीरिक , मानसिक एवं आध्यात्मिक जीवन के उत्कर्ष को धारण करने वाला धर्म ही है । धर्म का एक पहलू व्यक्तिगत है तो दूसरा समष्टिगत। सनातन धर्म में जीव को शिवत्व प्राप्त करवाने की क्षमता समाविष्ट है । कालक्रम से सिन्धु नदी के आसपास रहनेवाले लोगों में प्रचलित सनातन धर्म ही हिन्दू धर्म के नाम से विश्व में प्रचलित हुआ । ऋषि-मुनिओं की एक दीर्घकालीन परम्परा द्वारा एक ओर जीव , जगत और ज़गत नियंता के सम्बन्ध में तात्विक ज्ञान का सैद्धान्तिक या दार्शनिक पक्ष समृद्ध हुआ तो दूसरी तरफ़ व्यक्ति की भिन्न-भिन्न प्रकृति के अनुरूप धर्म-पालन के लिए विभिन्न प्रायोगिक स्वरूप को प्रतिष्ठित किया गया। षटदर्शन और ज्ञान, कर्म, उपासना के त्रिविध धार्मिक मार्गो का निरूपण इसी धार्मिक परम्परा की देन है। भारत की दीर्घकालीन धर्म-साधना के स्वरुप में देश और काल के अनुसार समय-समय पर ततकालीन विभिन्न परिस्थितियों के अनुरूप धर्म में किसी एक पक्ष की प्रमुखता को स्थापित किया जाता था। उसके आधार पर धर्म के उस विशेष स्वरूप को एक विशिष्ट नाम से जाना गया जैसे शैव धर्म, वैष्णव धर्म, शाक्त धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म आदि। वास्तव में ये सब उस सनातन धर्म के ही विभिन्न पक्ष या रूप है। कालान्तर में उसे विशिष्ट वैचारिक पक्ष की महत्ता के अनुसार उसके व्यावहारिक पक्ष में भी प्रमुख और गौण तत्वों का समावेश करके उसे परम्परागत धर्म से सदंतर भिन्न दर्शाने के यत्न में हिन्दू धर्म अनेक धर्मो और परम्पराओं का समुह जैसा प्रतीत होने लगा । भारत में धर्मसाधना के दो मुख्य रुप विकसित हुए हैं -
(i) निर्गुणोपासना (ii) सगुणोपासना .

प्राचीन क़ाल से इस देश में अनेक विदेशी जातियाँ आकर बस गई। परिणाम स्वरूप उनके आचार-विचार , उनकी मान्यताएँ , उनका रहन-सहन आदि

सनातन धर्म के उदात्त रूप में समाविष्ट होते गये । आर्यो से लेकर शक, हूण , पठाण आदि अनेक विदेशी जातियों का आगमन और आक्रमण इस देश की भूमि पर हुए हैं। भारत की उदात्त-धार्मिक सांस्कृतिक परम्परा में इन सबका बराबर समावेश होता रहा। लेकिन देश के इतिहास का मध्यकाल एक ऐसा अभिशापित युग सिद्ध हुआ जिसमें धार्मिक संघर्ष के विनाशकारी बीज़ बोये गये। मुस्लिम धर्म के कट्टर अनुयायिओं ने तलवार के बल पर भारत की धार्मिक परम्परा को पराजित करने और अपने धर्म के प्रचार-प्रसार का घनिष्ट यत्न किया । हिन्दू-मन्दिर तोड़े गये , धार्मिक यज्ञ आदि कर्मकाण्ड़ पर रोक लगा दि गई, पूजारियों एवं कर्मकाण्डियों के शिरोच्छेद किये गये, हिन्दू धर्म का पालन करने वालो को दण्डित किया जाता था,विभिन्न प्रकार की यातनाएँ दी जाती रही, बस यहीं से भारत में धार्मिक संघर्ष के विनाशकारी घटनाओं का आरम्भ हुआ। इससे पहले देश में धार्मिक विखवाद नहीं था,ऐसा कहने का हमारा तात्पर्य नही है । शैव और वैष्णवों में परस्पर वैमनस्य था, सगुण और निर्गुण के माननेवालों के बीच भी मतभेद था । धार्मिक संकिर्णता, मतभेद, विखवाद और वैमनस्य अवश्य थे लेकिन समाज़ में इसके ऐसे विनाशकारी परिणाम परिणत नहीं हुए थे जैसे हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष से उत्पन्न हुए । मुस्लिम शासन के दरम्यान समय-समय पर हिन्दू-मुस्लिम समाज़ के बीच दंगे, आगजनी की बारदातें, छुरेबाजियाँ, कत्ल आदि विनाशकारी तांड़व होते रहे।

मुस्लिम-शासन के उत्तरार्ध में पाश्चात्य देशों की व्यापारी टोलियों का भारत-आगमन शुरू हुआ। कालान्तर में इन में सबसे सफल टोली अंग्रेंजो की रही। अंग्रेंजो ने व्यापार के बहाने यहाँ अपना राज़नीतिक प्रभाव बढ़ाते हुए, बड़ी कुनेह से सत्ता की ड़ोर अपने हाथ में थाम ली । राजसत्ता प्राप्त होने पर धीरे-धीरे बड़ी चालाकी से ईसाई धर्म का प्रसार भी वे करते रहे । ऐतिहासिक परिस्थितियों ने ज़ब करवटें बदली और अंग्रेंजो के शासन का अन्त दिखाई देने लगा तो अंग्रेंजो ने कूटनीति से जनता की धार्मिक भावना को राज़नीतिक अंजाम दिया। परिणामस्वरूप देश के विभाजन जैसे अत्यन्त करूण, दुर्भाग्यशाली और कलंकित ऐतिहासिक परिस्थिति उत्पन्न हुई। पाकिस्तान मुस्लिमों के राज्य के रूप में अलग हुआ तो हिन्दू-मुस्लिमों के बीच परस्पर ऐसी कटुता और संकीर्णता उत्पन्न हुई कि जिससे मानवता के स्थान पर पशुता ने जन्म लेकर खून की होलियाँ खेली। पचास साल पूर्व हुई इन वारदातों का दुष्प्रभाव आज तक बना हुआ है। राज़नीतिक स्वार्थो ने अंग्रेंजों के द्वारा ड़ाली गई फूट को पाटने के स्थान पर विस्तार ही देने का काम किया है। अत: आज भी दो पड़ोसी देश के बीच दुश्मनावट की सीमाएँ ही विस्तृत होती जा रही है । धर्म के नाम पर दोनो देशो की जनता के ह्रदय में बोये गये इन विषैले बीज़ को सींचित करके अपनी स्वार्थ-सिद्धि

करने वाले जयचंदो की आज कमी नहीं है। लेकिन प्रत्येक सम्वेदनशील व्यक्ति को अतीत की इन दु:खद वारदातों से इतना तो बोध मिला है कि धार्मिकता के नाम पर होने वाले इन संघर्षो से न तो व्यक्ति का भला होता है न समाज़ का और न ही देश का । अत:हमारे आलोच्यकालीन कतिपय कहानिकारों ने धार्मिक संघर्ष की उन काली रातों के अन्धेरे की पृष्ठभूमि में मानव-धर्म की चिनगारियों को प्रकाशित करते हुए देश की उदात्त धार्मिक परम्परा को ज़ीवित रखने का भगीरथ प्रयत्न किया है ।

धार्मिक चेतना को उज़ागर करने वाली कहानियों में निम्नलिखित कहानियाँ प्रमुख हैं --'मलबे का मालिक' (मोहन राकेश), 'शरणदाता ', 'बदला' (अज्ञेय), 'बीज़ारोपण' (मिथिलेश्वर)।

(i) 'मलबे का मालिक' - मोहन राकेश

देश के विभाज़न की ऐतिहासिक परिस्थिति में धार्मिक कट्टरता के कारण हुई मानवता की पराजय की पृष्ठभूमि में मानवीय सम्वेदनाओं की विजय का मार्मिक चित्रण कहानीकार ने किया है ।

प्रस्तुत कहानी के आरंभ में भारत छोड़कर जानेवाले मुसलमान साढ़े सात साल के बाद हॉकी का मैच देखने के बहाने लाहौर से अमृतसर आते है। यहाँ आकर वे अपने मित्र-परिज़न को देख सकें । उन जाने पहचाने स्थलों को देखकर अपने सुखी भूतकाल की स्मृतियों का आनन्द ले सके। अनेक यात्रियों के साथ अब्दुल गनी भी अपने बेटे का मकान देखने आया था । बेटे से बिछुड़ने के बाद भेंट न हो सकी , लेकिन उस स्थल को देखकर कुछ तसल्ली पाने गनी चाचा पंजाब आये थे । रास्ते मे इन आगन्तुको से भारतीय आगे बढकर गले मिल रहे थे और लाहौर का समाचार पूछ रहे हैं ।

अब्दुल गनी अपने महौले में आता है तो देखता है कि छोटे-छोटे बच्चे खेल रहे हैं । मनोरी नामक युवान गनी को पहचान लेता है और उन्हें उनके मकान के पास ले जाता है । मकान अब मलबे मे बदल गया है । गनी चाचा मलबे के ढ़ेर पर बैठ जाते हैं । दंगो के समय दंगाइयो कि आड़ मे अब्दुल गनी के परिवार के सभी सदस्यों को रक्खे पहलवान ने मार ड़ाला था । रक्खे की नज़र गनी के घर पर थी परन्तु उसी रात किसी ने घर को भी जला दिया ।

मलबे पर काफी देर बैठनें के बाद अब्दुल गनी वापस लौट रहे थे कि रास्ते में उनकी मुलाकात रक्खे पहलवान से होती है। गनी इस बात से अनभिज्ञ है कि उसके परिवार को रक्खै ने मार ड़ाला है। रक्खा के प्रति स्नेहयुक्त विश्वास प्रदर्शित

करते हुए गनी चाचा अपने बेटे की मौत की पीड़ा को व्यक्त करते है। रक्खा,अब्दुल के प्यार को पाकर सहम जाता है। जब गनी कहता है "चिराग नहीं रहा तो क्या है ? तुम तो हो,मैंने तुमको देख लिया समझुंगाँ चिराग को देख लिया।"[75]इस बात का रक्खे पर गहरा प्रभाव पड़ता है उसका पाशवी मन मोम बनकर पिघलने लगता है।उसके गले से आवाज़ तक नहीं निकलती ।

'मलबे का मालिक'कहानी में निरूपित चेतना -

मोहन राकेश की 'मलबे का मालिक' कहानी स्वतंत्रताकालीन देश की सामाजिक, धार्मिक जनचेतना को अभिव्यक्त करने वाली एक श्रेष्ठ कहानी है । लेखक ने देश के बँटवारे की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि में मानवीय संवेदना और सांसकृतिक मूल्यों का सशक्त निरूपण किया है । मनुष्य स्वार्थ और लोभवश पाशवी कार्य तो करता है, लेकिन अंत में उसे कुछ प्राप्त नहीं हो पाता । रक्खा पहलवान ने पाशविक नरसंहार द्वारा गनी मियाँ की स्थावर सम्पत्ति पर अपना अधिकार स्थापित करने का यत्न किया लेकिन वह सम्पत्ति भी आग में जलकर नष्ट हो गयी,रह गया केवल 'मलबा। ऐसी ही विभीषिका का तांड़व विभाजन के दरम्यान देखा गया । जिसमें इस देश की सामाजिक एकता और सांस्कृतिक सद्भाव और संस्कृति की प्राचीन धरोहर तहस-नहस हो गयी थी। यह कहानी भारतीय, सामाजिक, परिवारिक, वैयक्तिक मूल्यचेतना के बिखराव और संक्राँति को उभारने वाली है।"[76]गनीमियाँ अपने एकमात्र पुत्र चिरागदीन और उसके परिवार की मृत्यु का दु:ख सहकर भी महौल्ले में सबके प्रति सद्भाव और प्रेमपूर्ण व्यवहार करता है । महौल्ले के समस्त हिंदू परिवारों को जितनी हमदर्दी गनीमियाँ के उदारचरित्र के साथ जुड़ती है,उतनी रक्खा पहलवान के साथ नहीं जुड़ पाती । इस प्रकार लेखक ने धार्मिक कट्टरता और असामाजिकता की विनाशकारी अग्नि तांड़व की विभीषिका में मानवीय संवेदना और देश के सांस्कृतिक गौरव को उजागर किया है ।

(ii) शरणदाता - अज्ञेय

देश-विभाजन के दरम्यान पारस्परिक धार्मिक कट्टरता के परिणाम स्वरूप जो मारकाट, लुटमार हुई,उसकी यथार्थ झलक इस कहानी में देखने को मिलती है। देविन्दर लाल जिस मुहौल्ले में रहते थे वह मुस्लिमों का था। भयभीत होकर हिन्दु परिवार वहाँ जा रहे थे।देविन्दर भी अपनी पत्नी और बच्चों को जालन्धर भेज चुके थे। वह भी जाना चाहता है परन्तु उनके पड़ोसी रफीकुद्दीन द्वारा रक्षा का आश्वासन पाकर वह रूक जाता है।

शहर में हिन्दू-मुसलमानों के बीच मारकाट शरू हो जाती है।

देविन्दर लाल के घर का ताला तोड़कर सारा सामान लूट लिया जाता है। रफीकुद्दीन, देविन्दर लाल को आश्रय देता है लेकिन उस पर दंगाइयों का दाबाव बढ़ता जाता हैं। यह देख रफीकुद्दीन देविन्दर को अपने दोस्त शेख उताउल्लाह के यहाँ भेज देता है। शेख, देविन्दर को पेड़ों की झुरमुट में बने हुए गैरिज में रखता है। वहाँ वह चोरी छिपे कैदी की स्थिति मे रहते हैं । उनके लिए दिन के छिपने पर एक बार खाना आता हैं। बचे हुए खाने को वह बिलार को डाल देते थे । एक दिन संध्या के समय खाना आता है। रोटी की तह मे उसे कागज़ की एक चिट्ठी मिलती है, जिसमें लिखा होता है कि खाना कुत्ते को खिलाकर खाना। देविन्दर हक्का-बक्का रह जाता है। बिलार को रबड़ी खिला देता है। बिलार मर जाता है। देविन्दरलाल परिस्थितियों को जान लेता है। अब वहाँ रहना सुरक्षित नहीं था । वह काली शेरवानी पहन के आँगन की दीवार लाँघकर सड़क पर निकल आता है।

डेढ़ महीने के बाद लाहौर से देविन्दर को पत्र मिलता है । जिसमें लिखा होता है " आप बचकर चले गये , इसके लिए खुदा का लाख-लाख शुक्र हैं। मैं मानती हूँ कि रेड़ियो पर जिनके नाम अपने अपील की है, वे सब सलामत आपके पास पहुँच जायें। मेरा कोई अहसान आप पर नहीं है सिर्फ यह इल्तजा करती हूँ कि आपके मुल्क में कोई अल्प संख्यक मजलूम हों तो याद कर लीजिएगा।"[77] देविन्दर की स्मृति में जैबू गूँज उठता है।

'शरणदाता' कहानी में निरूपित चेतना -

हिन्दू-मुसलमानों के धार्मिक दंगो के कारण निरीह जनता के उत्पीड़न को उजागरे करने वाली दूसरी कहानी अज्ञेय जी की 'शरणदाता' है ।" 'शरणदाता' में शरणदाता आदर्श बन कर नहीं व्यंग्य बनकर आया है । यों बदलते हुए संदर्भों व विघटित मूल्यों के बीच फंसे हुए व्यक्ति की मज़बूरी व कमजोरी भी है । "[87] धार्मिक कट्टरता और पाशविक स्वार्थ से जब मनुष्य अन्धा हो जाता है तब दया, प्रेम, मित्रता आदि मानवीय गुणों से विहीन होकर हिंसक पशु के समान दुष्कृत्य कार्य करता है । लेखक ने देश के विभाजन की विभिषिका में देविन्दरलाल जैसे निरीह लोगों की दुर्दशा को चित्रित किया है। मुस्लिम मौहल्ले में रहने वाले देविन्दरलाल साम्प्रदायिक दंगो की विषम परिस्थितियों से भयभीत होकर अपने परिवार को सुरक्षित स्थान पर (जालन्धर) भेज़ देता है। देविन्दरलाल स्वंय मुस्लिम मित्र रफिकुद्दीन के विश्वास और आश्वासन पर उसका आश्रय स्वीकार करता है । दंगो को बढ़ता हुआ देख रफीकुद्दीन, देविन्दर को अपने मित्र शेख की शरण में सौंपकर स्वंय मुसीबतों से छुटकारा पा लेता है । शेख सुरक्षा की जिम्मेदारी स्वीकार करके भी उसके प्राणों का दुश्मन बन जाता है। देविन्दर

को जहर देकर मारने की कोशिश की जाती है लेकिन शेख की पुत्री जैबू उसको रोटियों में रखें जहर की सुचना देकर उसकी रक्षा करती है और उसको जिन्दा भगाने में मदद करके मानवीयता की रक्षा करती है । इस प्रकार यह कहानी भी मानवीय सद्भाव और प्रेम के सांस्कृतिक मूल्यों को उज़ागर करती है ।

(iii) बदला - अज्ञेय

देश के विभाजन के दिनो में मुसलमानों ने हिन्दुओं और हिन्दुओं ने मुसलमानों की बहु-बेटियों की जो बेइज्जती एवं दुर्गती की उसे भुलाया नहीं जा सकता कहानी के प्रारम्भ में सुरैया नामक मुस्लिम स्त्री अपने दो बच्चो के साथ जैसे ही रेल के ड़िब्बे मे प्रवेश हुई,वहाँ पहले से ही दो सिक्ख मौजुद थे।वह भयभीत होकर उतरना चाहती थी परन्तु रेल की गति तेज हो गई। सिक्ख के पूछे जाने पर वह बताती है कि 'इटावे' जाने का झूठा उत्तर देती है लेकिन बच्चा सच बताकर कहता है कि वे अलीगढ़ जा रहे हैं। सुरैया दूसरे स्टेशन पर पुनः उतरने की तैयारी करती है लेकिन सिक्ख उसे आश्वासन देकर वहीं बैठे रहने को कहता है। दो हिन्दू उस ड़िब्बे में और चढ़ जाते है। सुरैया ड़र जाती है। यह देखकर सिक्ख कहता हैं कि आप ड़रे नहीं,आप मेरी बहन के समान है। मैं आपको अलीगढ़ तक ठीक-ठाक पहुँचा दूँगा।

हिन्दू के पूछने पर सिक्ख बताता है कि शेखपूरे मे सपरिवार सहित रहता था परन्तु अब अकेला ही रह गया हूँ क्योंकि मेरे परिवार के सभी सदस्यों को मार ड़ाला गया है । हिन्दू यात्री को अच्छा नहीं लगता कि सिक्ख अपने परिवार वालों को खोकर भी वह मुस्लिम औरत के प्रति सहानुभूति जता रहा है । हिन्दू सिक्ख को पाकिस्तान मे उसके परिवार के साथ हुए अत्याचारो की याद दिलाकर उसके मन में मुस्लिम स्त्री के प्रति नफरत पैदा करने का यत्न करता है । सिक्ख, हिन्दू यात्री को प्रत्युत्तर देते हुए कहता है कि "औरत की बेइज्जती सबके लिए शर्म की बात हैं। औरत की बेइज्जती, औरत की बेइज्जती है वह हिन्दू या मुसलमान की नहीं, इन्सान की माँ जी बेइज्जती है।"[79] वह कहता है मेरे साथ जो हुआ वह किसी के साथ न हो इसलिए वह दिल्ली और अलीगढ़ के बीच लोगो को पहुँचाने का कार्य करता है।उसका मकसद को इतना है कि चाहे हिन्दू हो, सिक्ख, मुसलमान हो, जो उसने देखा ऐसा किसी को न देखना पड़े।

इस प्रकार सिक्ख यात्री की उदारता, सहानुभूति एवं मानवीय सद्भाव का मार्मिक चित्रण करके लेखक ने मानव समाज को पुनः संगठित करने का यत्न किया है ।

'बदला'कहानी में निरूपित चेतना -

अज्ञेय जी की इस 'बदला'कहानी में भी मानवता-धर्म के उत्कृष्ट रूप को दिखाया है । विभाजन के समय उत्पन्न मानवीय सम्बन्धों में दरार और मूल्यों के टूटने को भी यहाँ चित्रित किया गया हैं। धार्मिक दंगो और हिन्दू-मुसलमान के बीच व्याप्त धार्मिक कट्टरता से परिचित मुस्लिम स्त्री जैसे ही रेल के ड़िब्बे में दाखिल होती है, ड़िब्बे में पहले से मौजूद दो हिन्दू सिक्खो को देखकर ड़र जाती है, अपने बेटे और स्वंय की जान की सुरक्षा के लिए अगले स्टेशन पर उतरने का निर्णय करती है लेकिन अगले स्टेशन पर दो और हिन्दू डिब्बे में चढ़ जाते हैं अतःवह उतर नहीं पाती। मुस्लिम स्त्री सुरैया को भयभीत देखकर सिक्ख उसे सुरक्षा का आश्वासन देता है । आपसी बातचीत के दरम्यान सिक्ख , हिन्दू यात्री को बताता है कि इन साम्प्रदायिक दंगो मे उसके परिवार के सभी सदस्यों को मार ड़ाला गया है ।हिन्दू यात्री सिक्ख को उकसाते हुए मुस्लिम स्त्री को मारकर अपने परिवार के लोगों की मृत्यु का बदला ले लेने की सीख देता है। सिक्ख यात्री प्रत्युत्तर में कहता है कि जो दुखद घटना उसके साथ घटी, वैसी किसी के साथ न घटे । वह स्त्री के सम्मान की बात कहकर भारतीय संस्कृति की रक्षा करता है, इसीलिए वह ऐसे भयभीत और मज़बूर लोगों को दिल्ली से अलीगढ और अलीगढ से दिल्ली पहुँचाने का उदात्त और मानवता पूर्ण कार्य करता है । सिक्ख यात्री की सहानुभूति पाकर मुसलमान स्त्री भी उसके प्रति अहोभाव और मानवीय सम्वेदना प्रकट करती है । इस प्रकार समाज में परस्पर सद्‌भाव, सहानुभूति और परस्पर विश्वास जताकर ही सामाजिक सुखाकारी, संगठन और एकता स्थापित की जा सकती है ।

लेखक ने यहाँ यह बताने का यत्न किया है कि दूसरो के प्रति दया, प्रेम, करूणा, उपेक्षा आदि हमारे सांस्कृतिक मूल्यों से अभी पूर्णतः मानव समाज रिक्त नहीं हुआ है । लेखक ने मानवीय प्रेम और उसके गौरव तथा हमारे साँस्कृतिक धरोहर की पुनः स्थापित करने का प्रयत्न किया है ।

(iv) बीजारोपण - मिथिलेश्वर

मिथिलेश्वर की कहानी 'बीजारोपण' अन्ध विश्वासो तथा वर्षो से चली आ रही प्राचीन परम्पराओं एवं रूढ़ियों के प्रति अपना विद्रोह प्रकट करती है । धरीछन और उसकी पत्नी गाँव में रहते हुए सुखमय जीवन व्यतीत करते है । गर्भवती होने पर एक दिन धरीछन की पत्नी का एकाएक स्वर्गवास हो जाता है । गाँव वाले उसे सलाह देते है कि गर्भवती स्त्री के मर जाने पर उसके हाथो और पैरों में किले ठोकनी चाहिए, ऐसा न किये जाने पर वह चुड़ैल का रूप धारण कर सबका अहित

करती है, गाँववालों को परेशान करती है। धरीछन अपनी मृत पत्नी को कील ठोकने से मना कर देता है और कहता है कि" मैं किसी भी सूरत में अपनी पत्नी के हाथ-पाँव में कीले नहीं ठोकने दूँगा।जिसे यहाँ रहना है रहे, अन्यथा जाये। मुझे किसी की परवाह नहीं । जब मेरी पत्नी दवा के बिना मर रही थी तब कोई क्यों नहीं आया था?" [80] कुछ दिनों के बाद गाँव में बिहारी यादव की भैंस मर जाती है। बिहारी की पत्नी धरीछन की मृत पत्नी पर दोष लगाते हुए कहती है कि " धरीछन की पत्नी अपनी जिन्दगी में उसकी भैंस को बहुत चाहती थी। इसलिए चुड़ैल बन जाने के बाद उसने उसे अपने पास बुला लिया है।" [81]गाँव में सोहराई राम के लड़के के बीमार होने पर , भोला की बुढ़िया को लकवा मार जाने तथा जगलाल की बेटी के कुँए में गिर जाने पर भी धरीछन की मृत पत्नी को ही दोषी ठहराया गया। धरीछन को दोषित ठहराते हुए लोग तंग करने लगे कि यदि उसने अपनी मृत पत्नी के हाथ-पैर में कील ठोकी होती तो शायद वह चुड़ैल बनकर सबको परेशान न करती । धरीछन गाँववालों की नाराजगी, क्रोध और आरोपों को चुपचाप सहता है लेकिन एक दिन तंग आकर गाँव छोड़कर चला जाता है। धरीछन के जाने के बाद अलगू महतो, नरसिंह राम तथा सूर्यदेव सिंह के साथ भी ऐसी ही घटनाएँ घटती हैं, परन्तु वे गाँव नहीं छोड़ते हैं , धरीछन के पदकदमों पर चल गाँव वालों के दाकियानूसी विचारों के खिलाफ लड़ते हैं ।

'बीजारोपण'कहानी में निरूपित चेतना -

मिथिलेश्वर जी द्वारा लिखी कहानी ' बीजारोपण ' में आधुनिक युग में रूढ़ियों और अन्धनिश्वासों से मुक्त होने की भावना को उजागर किया गया है। आज के वैज्ञानिक युग में मनुष्य ने अपने को प्राचीन रूढ़ियों और अन्धविश्वासो से काफी हद तक मुक्त कर लिया है लेकिन देहातों में आज भी इन धार्मिक अन्धविश्वासों की रूढ़ियो को देखा जा सकता है । अब शिक्षा के प्रचार और प्रभाव के कारण सूदूर गाँवो में भी धीरे-धीरे धार्मिक मान्यताओं में जागरूकता का आरम्भ हो चुका है ।

धरीछन की पत्नी की मृत्यु के पश्चात् गाँव में किसी की भी मृत्यु हो या कोई दुखद घटना घटे तो उसका दोष धरीछन की मृत पत्नी को चुड़ैल मानकर लगाया जाता है।धरीछन इस सब घटनाओं से परेशान होकर गाँव छोड़कर चला जाता है।उसके जाने के बाद अलगू महतो , नरसिंह राम और सूर्यदेव सिंह आदि के साथ भी ऐसी घटनाएँ घटीं तो इन्होंने ने भी धरीछन की तरह गाँववालों का विरोध किया लेकिन गाँव नहीं छोड़ा ।

लेखक ने यह बताने का यत्न किया है कि धीरे-धीरे गाँवों में अंधविश्वास एवं परम्परा सें चली आ रही धार्मिक मान्यताएँ, रूढ़ियॉ अब टूट रही हैं ।" धरीछन गाँव वालों का इतना विरोध सहते हुए भी झुकता नहीं है और उसका यह प्रयत्न आगे घटित होने वाली वैसी ही घटनाओं में फँसे लोगों के लिए बीजारोपण का काम करता है।"[82] कहानी के अंत में धरीछन भले ही गाँव छोड़कर चला जाता है लेकिन उसके द्वारा बोया गया बीज़ गाँव के अन्य लोगों के लिए प्रेरणा बनता है। इसीलिए अब गाँव में एक ऐसा जागरूक लोगों का वर्ग भी तैयार हो रहा है जो धरीछन के पदचिह्नों पर चलकर प्राचीन रूढ़ियों और अंधविश्वासों का विरोध करके ग्रामीण जनता को अंधविश्वासों की बीड़ियों से मुक्त करने का यत्न करता है ।

देश की समकालीन धार्मिक चेतना पर आधारित उपर्युक्त चार कहानियों के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष पाये जाते हैं -

मध्यकाल से लेकर आज तक देश में हिन्दू-मुसलमानों के बीच धार्मिक संकीर्णता और धर्म के नाम के नाम पर अपने स्वार्थ सिद्धि करनेवाले समाज के शत्रुओं के कारगत प्रयोगों के अनेक दुष्परिणाम समय-समय पर दोनों ही धर्म के मानने वाले लोगों ने भुगते हैं । देश में सामाजिक विघटन के परिणाम स्वरूप जनता, राज्य और देश का अहित ही होता रहा है। इसके बावजूद भी परस्पर संघर्ष लगातार चलते रहे हैं।समय-समय पर शत्रुता की चिंगारियाँ भीषण आग का रूप धारण करके विनाशकारी बन जाती थी । हिन्दू-मुसलमानों के पारस्परिक शत्रुभाव की चरम परिणति देश के विभाजन की दुखद घटना कही जा सकती है । इस ऐतिहासिक दुर्घटना के परिणाम स्वरूप जनता की पीड़ा, परेशानियॉ, शारीरिक, मानसिक, आर्थिक संकटों से उत्पन्न त्रासदी और भय के आतंक का यथार्थ और पूर्णत: वर्णन करना किसी भी सम्वेदनशील मनुष्य के वश की बात नहीं है । नरसंहार की वारदाताओं और विभीषिकाओं की काली पृष्ठभूमि पर समकालीन कहानिकारों ने पुन: मानवीय सम्वेदना, स्नेहयुक्त मित्रता, स्त्री सम्मान, पारस्परिक उदारता आदि को निरूपित करने का यत्न किया है । हमारी सांस्कृतिक धरोहर के इन उज्जवल पक्षों का चित्रण ' मलबे का मालिक' के गनी चाचा 'शरणदाता'की जैबू और 'बदला'कहानी के सिक्ख के चरित्र द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत कहानियों के माध्यम से लेखकों ने इस भावबोध को निरूपित करने का यत्न किया है कि धार्मिक आचरण में बाहरी आचार-विचार एवं रूढ मान्यताओं के स्थान पर मानवतावादी गुणों का व्यक्ति एवं समष्टिगत व्यवहारिक रूप ही समस्त मानव-समाज के कल्याणकारी एवं गौरवपूर्ण है ।

उपर्युक्त कहानियों के आधार पर यह भी स्पष्ट होता है कि मानव-समाज में आज भी ऐसे उदात्त,संस्कारी एवं मानवीय गुणों से युक्त व्यक्ति की ही महत्ता,सम्मान और गौरव की है,जो अपने व्यक्तिगत दु:ख,पीड़ा,भय, स्वार्थ सामाजिक दबाव एवं सुखद वर्तमान एवं भविष्य की कामना को छोड़कर जनहित एवं बहुजन समाज के कल्याण के लिए जाता है । ' मलबे का मालिक ' में रक्खा पहलवान की स्वार्थी शक्ति से अधिक सशक्त गनी चाचा की स्नेह युक्त सद्भाव की महत्ता अधिक है । इसी प्रकार जैबू और सिक्ख चरित्रों का महत्व भी क्रमशः 'शरणदाता' और 'बदला' कहानी में निरूपित है।

अन्तिम कहानी ' बीजारोपण' समकालीन धार्मिक भावबोध को उजागर करती है।भारतीय समाज धर्म प्रधान समाज है लेकिन धर्म के नाम पर रूढ़ परम्पराओ, धार्मिक कर्मकाण्ड़ों और अंधविश्वासयुक्त मान्यताओं का ही बोल-बाला रहा है।धर्म सबके प्रति उदारता, प्रेम, परस्पर मित्रता, दया, करूणा सीखाता है । आज हरेक व्यक्ति धर्म के नाम पर अपने स्वार्थ पूर्ति की राह खोजता है। भारतीय समाज के पुनरूत्थान और देश के उत्कर्ष के लिए जरूरी है कि हम अपने धार्मिक सांस्कृतिक घरोहर के सच्चे स्वरूप को पहचाने और तदानुसार व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन जीये। इस प्रकार प्रस्तुत कहानियाँ राष्ट्रीय चेतना के धार्मिक पक्ष को उजागर करने वाली हैं ।

मूल्यांकन :-

साठोत्तरी हिन्दी कहानियों के अध्ययन से स्पष्ट है कि इस युग की राष्ट्रीय चेतना, कहानियों की संक्षिप्त कथावस्तु द्वारा भी विविधोन्मुखी रूप से निरूपित हुई है। प्रस्तुत अध्याय में तत्सम्बन्धित लगभग ३२कहानियों का अध्ययन किया गया है। इनमें राष्ट्रीय चेतना के विभिन्न पक्ष मुखर हुए हैं,जो मुख्य रुप से राजनीतिक,सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक पक्ष के रूप मे प्रधानत: पाये जाते हैं ।

देश की राजनीतिक परिस्थितियों से उभरी हुई आम जनता की अनुभूति का प्रभावशाली चित्रण निम्नलिखित कहानियों मे प्राप्त है । ' मुर्दा मैदान ' 'अर्थतन्त्र','परमात्मा का कुत्ता' और 'दौने की पत्तियाँ'आदि कहानियाँ प्रमुख है । इन कहानियों में लेखको ने आम जनता की परेशानियो, पीड़ा,कष्ट एवं संघर्ष का निरूपण करते हुए यह जताने का यत्न किया है कि इन सबका मुख्य कारण राजतंत्र में फैला भ्रष्टाचार, स्वार्थी, रिश्वतखोरी एवं कपटी राजनेताओं के दोहरे व्यक्तित्व, पूँजीवादियों से सॉठ-गॉठ तथा सरकारी कर्मचारियों की लोगों के प्रति उदासीनता एवं निष्क्रियता आदि प्रमुख है।

देश की राजनीतिक स्वतन्त्रता के पश्चात् लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था में सरकार द्वारा जनता के दु:ख-दर्द को दूर करके एक ऐसी परिस्थिति के निर्माण का लोगों के मन मे सपना संजोया गया था , जहाँ प्रत्येक व्यक्ति को जीवन निर्वाह की

सरलता एवं सुगमता,जीवन सुरक्षा के समान अधिकार तथा जान-माल की रक्षा के लिए न्याय की प्राप्ति होगी।स्वतन्त्रता प्राप्ति के आज पचास साल की लम्बी अवधि बीत जाने पर भी इन स्वप्नों का साकार रूप नहीं पाया जाता है । प्रस्तुत कहानियों में गरीब, कमजोर व्यक्ति को अपने बच्चों की सुरक्षा के लिए पुलिस से पर्याप्त सहयोग के स्थान पर प्राप्त पीड़ा एवं व्यथा का चित्रण पाया जाता है।तद्उपरान्त 'अर्थतंत्र' में भी भ्रष्ट राजनेताओं के प्रति लोगों के आक्रोश का निरूपण हुआ है । इस प्रकार प्रथम दो कहानियों में समकालीन राजनीतिक परिस्थिति से पीड़ित आम जनता की व्यथा-कथा को निरूपित किया गया है। शेष दो कहानी राजतंत्र से प्रभावित भ्रष्ट सरकारी कर्मचारियों की मनोवृतियों को उजागर करती हैं। इस प्रकार उपर्युक्त कहानियों में स्वार्थी राजनेताओं तथा उनकी भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था से उत्पन्न आम जनता की पीड़ाओं, परेशानियों, व्यथाओं एवं संघर्षो को यथार्थ रूप में साकार किया गया है ।

राष्ट्रीय चेतना के सामाजिक स्वरूप को उजागर करने वाली लगभग १७ कहानियों के अध्ययन से स्पष्ट है कि देश की परम्परागत सामाजिक व्यवस्था में कतिपय ऐसी समस्याएँ अपने व्यापक रूप से समाज में व्याप्त हैं जो देश के विकास में अवरोधक सिद्ध हो रही हैं।इन कहानियों में 'पानी ', 'इज्जत', 'सर्पदंश',' लहू पुकारे आदमी ', 'बीच के लोग'तथा'उच्चाटन' आदि छः कहानियाँ जातीय भेद-भाव एवं छुआ -छूत की समस्या से सम्बन्धित हैं।भारत की वर्ण-व्यवस्था सदियों से जटिल और संकीर्ण होकर सामाजिक बिखराव का एक प्रमुख कारण बनी हुई है।आज भी देश में असंख्य ऐसे निम्नवर्गीय परिवार हैं जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी वर्गभेद का शिकार होकर दीन-हीन अवस्था को प्राप्त हुए हैं।स्वातंत्रता आन्दोलन के दरम्यान राजनीतिक गतिविधियों के साथ-साथ सामाजिक सुधार के प्रयत्न हमारे लोक नेताओं ने किए थे,लेकिन अफसोस के साथ यह कहना पड़ता है कि आज के वैज्ञानिक युग में भी ज़मींदार,ठाकुर जैसे पूँजीवादी सम्पन्न वर्ग अपने अभिजात्य होने के अभिमान में अंधे होकर 'मंगल', 'गोकुल'जैसे कहानियों के गरीब और दीन चरित्रों पर अत्याचार करते हैं।'पानी','इज्जत'और 'लहू पुकारे आदमी' कहानी में अभिजात्यवर्ग का अहंकार और उनके द्वारा निम्नवर्गीय लोगों पर होने वाले अत्याचारों का यथार्थ चित्रण पाया जाता है। जन्मजात कुलीन लोगों की संकीर्णता स्वार्थपरस्ती और निर्दयता की तुलना में अभावहीन हरिजनों की उदार मानवतावादी कर्तव्यनिष्ठा की श्रेष्ठता को दर्शाया गया है।इन कहानियों में भारतीय समाज की जर्जित प्राचीन व्यवस्था के मलबे पर सांस्कृतिक मूल्यों से युक्त मानवतावादी नई सामाजिक व्यवस्था की नींव ड़ाली गई है । समकालीन परिवेश में हरिजनों तथा निम्नवर्गीय लोगों में अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए नयी चेतना जागृत होने लगी है । 'उच्चाटन' का

'बिलसवा' साहूकार के अत्याचारों से तंग आकर शहर चला जाता है और परिश्रम से रूपये कमाकर साहुकार का कर्ज अदा करता है।'बीच के लोग'कहानी में 'मनरा' और 'फऊदी का बेटा 'जैसे चरित्र निर्भिक होकर 'बुझावन चाचा' की ज़मीन की रक्षा करके ठाकुर के अत्याचारों का विरोध करते हैं। इस प्रकार प्रस्तुत कहानियों में नई सामाजिक व्यवस्था तथा निम्नवर्गीय लोगों की मानसिकता में आ रहे बदलाव का महत्वपूर्ण पक्ष उजागर किया गया है।सामाजिक दूषण से सम्बन्धित इन कहानियों में निरूपित मानव व्यथा किसी एक परिवार या एक स्थल तक सीमित नहीं है।सामाजिक सुधार की यह प्रक्रिया स्वतंत्रता आंदोलन का एक अंग बनकर देश में सर्वत्र व्याप्त हुई थी,जो आज भी कार्यान्वित है।

सामाजिक कहानियों में उभरने वाला दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष नारियों के जीवन से सम्बन्धित है। भारतीय समाज अब तक पूर्णत:पुरूष प्रधान रहा है। स्त्रियों के प्रति हमारी संस्कृति में सम्मानीय दृष्टिकोण का आग्रह अवश्य रहा है। तथापि व्यवहारिक जगत में नारी-पुरूष के आधीन, आश्रित ओर भोग्या के रूप में ही रही है।उसके स्वतंत्र अस्तित्व की न तो कोई पहचान थी और न ही उसकी योग्यता की कोई सामाजिक महत्ता थी। लेकिन आज राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय नारी अपने महत्वपूर्ण स्थान क़ी अधिकारिणी सिद्ध हो रही है। अब भारतीय नारी अबला,पराश्रित, दुर्बल, निरीह और दयनीय नही है।'एक औरत एक जिन्दगी', 'छोटे शहर की शकुंतला', 'तोहमत', 'मैं नारी हूँ', 'उपहार', 'एक भटकी हुई मलाकात', 'एक टुकड़ा धरती' में नारी के नए रूप का सफल अंकन हुआ है । आधुनिक नारी प्रतिकुल परिस्थितियों में भी अपनी संपूर्ण शक्तिमता के साथ संघर्ष करती हुई अपनी अस्मिता को प्रतिपादित करती है तथा देश के विभिन्न क्षेत्रो में कार्यरत रहते हुए राष्ट्रीय-जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध हो रही है।

उपर्युक्त कहानियों में से 'एक औरत एक जिन्दगी' तथा 'एक टुकड़ा धरती' जैसी कहानी की नायिका ग्रामीण एवं अशिक्षित है।लेखक ने उसके जीवन संघर्ष को वर्णित करते हुए 'भवानी' और 'शकुन्तला' के माध्यम से नारियों के मनोबल,साहस एवं उनके अथक परिश्रम की सराहना की है।'शकुन्तला' का पति आर्थिक संकट से घबरा कर पलायनवादी की तरह आत्महत्या कर लेता है। पति की मृत्यु के पश्चात कोमल ह्दया शकुन्तला अपने अदमय मनोबल और आत्मगौरव से प्रतिकुल परिस्थितियों से जुझती हुई बच्चों का पालन-पोषण करती है और अपने लिए स्वंय एक आश्रित स्थान का निर्माण करती है।

'छोटे शहर की शकुन्तला' , 'मैं नारी हूँ' ' 'एक भटकी हुई मलाकात' नामक उपर्युक्त कहानियों में सह्दय नायिकाएँ अपने पति द्वारा ही अत्याचार का शिकार होती हैं।'छोटे शहर की शकुन्तला' में कामकाजी मध्यमवर्गीय नारियों की आर्थिक परतंत्रता और संघर्षशील दाम्पत्य जीवन की झाँकियाँ प्रस्तुत है। 'मैं नारी हूँ' कहानी में नायिका 'रंजना' असामाजिक तत्वों का शिकार होकर पति द्वारा निष्ठुरता से ठुकराई जाती है। संकट की ऐसी परिस्थिति में भी वह निरन्तर अपना अभ्यास जारी रखते हुए स्वतंत्र रूप से अपने पैरों पर

खड़ी होती है।'रंजना'के चरित्र द्वारा नारी के आत्मगौरवपूर्ण अस्तित्व की पहचान करवाई गई है।'उपहार'कहानी में विधवा नारी की मानसिकता में आ रहे बदलाव का यथार्थ निरूपण करती है।विधवा नारी के जीवन पर लगाए गए सामाजिक बंधनों से मुक्त'गुलाबी'अपना स्वतंत्र जीवन निर्वाह करती है।अपने आश्रयदाता ठाकुर की लोलुप निगाहों का पता चलने पर वह उसकी नौकरी ठुकरा देती है। 'तोहमत' कहानी में आधुनिक शिक्षित युवतियों के आत्मसम्मान,साहस और निर्भयता को उजागर करके नई पीढ़ी के सशक्त स्वरूप का परिचय पाया जाता है। इस प्रकार उपर्युक्त सात कहानियों में आधुनिक नारी की मन:स्थितियाँ, उनका जीवन संघर्ष, उनके अन्तर्द्वन्द्व,साहस और आत्मगौरवपूर्ण व्यक्तित्व के प्रतिपादन का सराहनीय यत्न पाया जाता है। यह निर्विवाद है कि इन नारी-चरित्रों द्वारा किसी महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय-कार्य की संपन्नता नहीं प्राप्त होती है लेकिन यह निश्चित है कि भारतीय समाज का यह अभिन्न अंग,जो अब तक निरीह,दुर्बल, पीड़ित,शोषित थी,वह अब अपने बलबूते पर आत्मनिर्भर होकर देश के सामाजिक एवं सांस्कृतिक पक्ष को सुदृढ़ एवं गौरवान्वित कर रहा है।अत:यह राष्ट्रीय गौरव का प्रमुख आधार कहा जा सकता है।

दहेज प्रथा भारतीय समाज का एक ऐसा कलंक है जो अनेक निर्दोष युवतियों के जीवन को नरक बनाकर दिन प्रतिदिन गहराता रहा है। आधुनिक जीवन में अर्थ की बढ़ती हुई महत्ता से इस सामाजिक कुप्रथा को अधिक बढ़ावा मिला है। आज समाज का हर वर्ग इसका शिकार है। दहेज प्रथा का शिकार अब केवल नारियाँ नहीं हैं अपितु भारतीय समाज इस कुप्रथा का शिकार बनकर अपने साँस्कृतिक पतन की ओर अग्रसर हो रहा है।हमारे अध्ययनकी परिसीमा में आने वाली दहेज प्रथा से सम्बन्धित कहानियाँ मुख्यत:चार है।'माँग','बेटे की बिक्री','विद्रोह', 'पीढियाँ'।इनमें 'पीढियाँ' एक अलग प्रकार की कहानी कही जा सकती है लेकीन वह भी है विवाह की समस्या से सम्बन्धित।शेष तीन कहानियों में से'मॉग'के अन्तर्गत लड़की के विवाह के लिए चिन्तित माँ-बाप की परेशानियॉ,योग्यवर की प्राप्ति की कठिनाईयॉ,सौदेबाजी के लिए अपनाएँ जाने वाले विभिन्न रूप तथा इनमे से मार्ग ढूँढ़ने के प्रयत्न में विवश लोगों की चलाकियॉ,विवाहमंड़प में सजधज कर बैठी हुई नववधु की दयनीय स्थिति का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत है।'बेटे की बिक्री' में विवाह के योग्य पुत्र के लिए लालची पिता के व्यवहारिक कुशलता को चित्रित किया गया है। वह मौन-भाव से पुत्र के विवाह द्वारा बड़ी रकम ऐंठने के चक्र में फँसा हुआ है।संबंधी बनने के इच्छुक लोगों के बीच बोली लगाई जाती है।इस प्रकार इन्सान अपनी सन्तान को भी बाजार की एक बिकाऊ चीज बना लेता है। अर्थ लाभ के इन दिवानों ने आज मानवीय प्रेम और संस्कारों की महत्ता को मूल्यहीन बना दिया है।'विद्रोह' कहानी द्वारा नई पीढ़ी के युवान को इस कुप्रथा का अंत करने के लिए प्रयत्नशील दिखाया गया है।कहानी का नायक 'सुनील'अपने पिता के आर्थिक लोभ से परेशान होकर यह निर्णय करता है कि वह एक सुशील विधवा नारी से विवाह करेगा।इस प्रकार उपर्युक्त कहानियॉ दहेज प्रथा के दुष्परिणामों कों उजागर करने वाली कहानियॉ हैं। दहेज प्रथा का यह दूषण भारतीय समाज को घुन की तरह अन्दर से खोखला बन रही है। अत: इस समस्या के निरकरण के उद्देश्य से लिखीगयीं कहानियॉ राष्ट्रीय समस्या से संबन्धित कहीं जा सकती है।

भारतीय सरकार ने देश के पिछड़े हुए,गरीबी-रेखा से नीचे जीने वाले लोगों के आर्थिक स्तर को सुधारने की बड़ी-बड़ी बातें करते हुए अनेकों योजनाएँ प्रवर्तीत की । लेकिन आज भी पूंजीवादियों के प्रभाव तथा उनके गठबन्धन के कारण समाज के अभावग्रस्त लोगों की दयनीय दशा में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। कतिपय कहानीकारों ने गरीबों के अभावग्रस्त जीवन तथा विभिन्न समस्याओं से जूझते निरीह जनता के संकट को शब्दचित्र द्वारा साकार किया है। साठोत्तरकालीन ऐसी चार कहानियाँ प्रमुख हैं -- 'हरिजन सेवक','माया माटी और मानव','संभल के बाबू','युद्ध' । 'हरिजन सेवक ' और 'माया माटी और मानव 'की कथावस्तु द्वारा ग्रामीण मजदूरों की दयनीय दशा,उनका आर्थिक शोषण तथा अब उनमें आ रही जागरूकता के द्रश्य अंकित हैं । युद्ध और सँभल के बाबू कहानी शहरी जीवन में मजदूरों और घरेलू नौकर की परिस्थितियों से संबंधित है।'युद्ध' कहानी द्वारा मिल-मालिक और मजदूरों के संघर्ष को निरूपित करते हुए मजदूरों की युनियन के रूप में चित्रित कर उनकी संगठित शक्ति को उभारा गया है ।

उक्त कहानियों के आधार पर यह स्पष्ट है कि स्वातंत्र्योत्तर भारत में 'अर्थ' के असमान वितरण से अनेक समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं । 'अर्थ' को लेकर वर्गभेद की खाई दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। आधुनिक समाज अब जातिभेद के साथ-साथ वर्गभेद की समस्या का सामना कर रहा है ।'अर्थ' से उत्पन्न संघर्ष सामाजिक संबंधों में कटुता घोलकर राष्ट्रीय समस्याओं को अधिक विकट बनाता है ।

आर्थिक संकट ने अब हमारे सांस्कृतिक घरोहर को भी झकझोर दिया है। सुभाष पन्त ने 'लाश' कहानी के अंतर्गत समाज के शिक्षा क्षेत्र जैसे संस्कार की संस्थानों में फैले भ्रष्टाचार और उसके दुष्परिणामों का मार्मिक निरूपण किया है । देश और समाज की नयी पीढ़ी में संस्कारों का सींचन करनेवाले मास्टरजी की अकाल मृत्यु हमारे सांस्कृतिक घरोहर के नष्ट प्रायः अस्तित्व को सूचित करती है ।

जनता की आर्थिक स्थिति के सुधार के उद्देश्य से सरकार द्वारा अनेक योजनाएँ समय समय पर प्रवर्तीत होती रही हैं । लेकिन कई बार सरकार की नीतियॉ लाभप्रद बनने के स्थान पर विपरित परिणाम प्रदान करती है । प्रीति श्री की 'आक्रोश'कहानी में सरकार की आरक्षण नीति से उत्पन्न बेरोजगारी की समस्या अधिक विकट प्रतीत होने लगती है।परिणामस्वरूप आज का शिक्षित नवयुवा अपने अंधकारमय भविष्य से आशंकित होकर अपना आक्रोश व्यक्त करता है।नवयुवानों के मन में आशा-आकांक्षा के स्थान पर निराशा हताशा और उदासीनता का भरना देश के लिए एक चिंता का विषय कहा जा सकता है । इसी प्रकार 'सतीश जमाली' ने 'बच्चे' कहानी द्वारा

देश की आनेवाली पीढ़ी की अवदशा का मार्मिक चित्रण करके समाज और सरकार को सावधान करने का मानो यत्न किया है ।

देश की समकालीन धार्मिक चेतना पर आधारित चार कहानियाँ हमारे अध्ययन की परिधि में पायी गयी है । 'मलबे का मालिक' , 'शरणदाता' , 'बदला' और 'बीजारोपण' इन प्रथम तीन कहानियों के द्वारा हिन्दू-मुस्लिमों की धार्मिक कट्टरता के दुष्परिणामों को चित्रित करके मानवीय संवेदना के स्वर को मुखरित किया है । इन कहानियो में मानव-प्रेम की महत्ता को दर्शाते हुए धर्म के सच्चे स्वरूप को प्रतिपादित करने का यत्न किया गया है । परस्पर के विश्वास, प्रेम और दयाभाव के मानवीय गुणों की महत्ता का पक्षधर बनके कहानीकारों ने देश के सांस्कृतिक गौरव को पुन:स्थापित करने का यत्न किया है ।'बीजारोपण' कहानी द्वारा लेखकने धार्मिक अंधश्रद्धा को नष्ट करके मानवीय प्रेम के बीज को प्रस्फुटित करने का यत्न किया है ।

इस प्रकार उपर्युक्त कहानियों के विवेचन द्वारा देशके राजनैतिक सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक पक्षों पर प्रकाश डालते हुए तत्संबंधी समस्याओं एवं समाधानों द्वारा देश के चौमुखी विकास में लेखकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है ।

--: संदर्भ-सूची :--

१. डॉ॰ रामसागर त्रिपाठी, डॉ॰ शान्तिस्वरूप गुप्त	- बृहत साहित्यिक निबन्ध	- पृ. ८०८
२. वही	- वही	- पृ. ८०८
३. वही	- वही	- पृ. ८०९
४. वही	- वही	- पृ. ८१२
५. डॉ॰ चातक, रामकुमार शर्मा	- हिन्दी साहित्य का इतिहास	- पृ. ४०२
६. डॉ॰ रामप्रसाद	- साठोत्तरी हिन्दी कहानी में पात्र और चरित्र-चित्रण	- पृ. ३०
७. डॉ॰ नागेश्वर सिंह	- ६० के बाद की कहानी : समय बोध के निकष पर (अनुवाक्)	- पृ. ३६
८. डॉ॰ शिवप्रसाद सिंह	- आधुनिक परिवेश और नव लेखन	- पृ. १७०
९. डॉ॰ विजय द्विवेदी	- साठोत्तर हिन्दी कहानी	- पृ. १०२
१०. रामदरश मिश्र	- इकसठ कहानियॉ : 'मुर्दा मैदान'	- पृ. ३४९
११. वही	- वही	- पृ. ३५३
१२. सतीश जमाली	- बच्चे तथा अन्य कहानियाँ : 'अर्थतंत्र'	- पृ. ७७
१३. वही	- वही	- पृ. ८५
१४. सम्पादक	- डॉ॰ रामदरश मिश्र, डॉ॰ नरेन्द्र मोहन हिन्दी कहानी दो दशक की यात्रा	- पृ.१४७
१५. डॉ॰भैंरूलाल गर्ग	- आज की हिन्दी कहानी	- पृ. २८
१६. मोहन राकेश	- मेरी प्रिय कहानियाँ :'परमात्मा का कुत्ता'	- पृ. ५६
१७. वही	- वही	- पृ. ५९
१८. डॉ॰ भैंरूलाल गर्ग	- आज की हिन्दी कहानी	- पृ. २८
१९. मार्कण्ड़ेय	- हंसा जाई अकेला : 'दौने की पत्तियाँ'	- पृ. ३८
२०. वही	- वही	- पृ. ३८
२१. रामदरश मिश्र	- इकसठ कहानियाँ : 'पानी'	- पृ.५००
२२. वही	- वही	- पृ.५००
२३. रामदरश मिश्र	- इकसठ कहानियाँ : 'इज्जत'	- पृ.४३९
२४. वही	- वही	- पृ.४४३
२५. वही	- वही	- पृ.४३९
२६. मधुकर सिंह	- प्रतिनिधि कहानियॉ : 'लहू पुकारे आदमी'	- पृ. ७२

२७. वही	- वही	- पृ. ७२
२८. वही	- वही	- पृ. ८१
२९. मार्कण्ड्डेय	- बीच के लोग	- पृ. ४०
३०. वही	- वही	- पृ. ६१
३१. डॉ॰ रामप्रसाद	- साठोत्तरी हिन्दी कहानी में पात्र और चरित्र - चित्रण	- पृ.५७
३२. वही	- वही	- पृ.५७
३३. डॉ॰ पद्‌मशा	- छोटे शहर की शकुन्तला	- पृ.६६
३४. डॉ॰ विजया वारद	- सोठोत्तरी हिन्दी कहानी और महिला लेखिकाएँ	-पृ.१०५
३५. विष्णु प्रभाकर	- इक्यावन कहानियाँ : 'मैं नारी हूँ'	-पृ.४०८
३६. वही	- वही	-पृ.४१२
३७. डॉ॰रामप्रसाद	- साठोत्तरी हिन्दी कहानी में पात्र और चरित्र-चित्रण	-पृ.१७८
३८. वही	- वही	-पृ.१६४
३९. शिवप्रसाद सिंह	- अन्धकूप सम्पूर्ण कहानियाँ : 'उपहार'	-पृ.१९२
४०. वही	- वही	-पृ.१९२
४१. रामदरश मिश्र	- इकसठ कहानियाँ: 'एक भटकी हुई मलाकात'	-पृ.१७८
४२. वही	- वही	- पृ.१७८
४३. कमला सिंधवी	- एक टुकड़ा धरती	- पृ. २३
४४. डॉ॰ विजया	- साठोत्तरी हिन्दी कहानी और महिला लेखिकाएँ	- पृ.१४८
४५. रामदरश मिश्र	- इकसठ कहानियाँ - 'एक औरत एक जिन्दगी'	- पृ.१८०
४६. वही	- वही	- पृ.१६४
४७. सम्पादक	- डॉ॰ रामदरश मिश्र, डॉ॰ नरेन्द्र मोहन हिन्दी कहानी दो दशक की यात्रा	- पृ.९१
४८. विवेकी राय	- बेटे की बिक्री : 'मॉग'	- पृ.७३
४९. वही	- वही	- पृ.७४
५०. वही	- वही	- पृ.७५

५१. वही - वही - पृ. ७६

५२. डॉ॰ रामप्रसाद - सोठोत्तरी हिन्दी कहानी में पात्र और चरित्र - चित्रण - पृ.२१२

५३. विवेकी राय - बेटे की बिक्री : 'विद्रोह' - पृ. ८५

५४. वही - वही - पृ. ८९

५५. वही - वही - पृ. ९१

५६. विवेकी राय - बेटे की बिक्री - पृ.१०९

५७. डॉ॰ रामप्रसाद - साठोत्तरी हिन्दी कहानी में पात्र और चरित्र - चित्रण - पृ.१६४

५८. वही - वही - पृ.१५५

५९. डॉ॰ बामन.वी.अहिरे - हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना : एक सर्वेक्षण - शोध ग्रन्थ - पृ.१५४

६०. वही - वही - पृ.१५४

६१. वही - वही - पृ.१२६

६२. मधुकर सिंह - प्रतिनिधि कहानियाँ : 'हरिजन सेवक' - पृ.१०६

६३. वही - वही - पृ.१०९

६४. डॉ॰ रामप्रसाद - सोठोत्तरी हिन्दी कहानी में पात्र और चरित्र - चित्रण - पृ.१३५

६५. सतीश जमाली - बच्चे तथा अन्य कहानियाँ : 'युद्ध' - पृ.१०३

६६. वही - वही - पृ.१०७

६७. डॉ॰ भैंरूलाल गर्ग - आज की हिन्दी कहानी - पृ.८५

६८. सुभाष पन्त - तपती हुई जमीन : 'लाश' - पृ.१३

६९. वही - वही - पृ.१३

७०. वही - वही - पृ.१८

७१. प्रीति श्री - अपना-अपना मरूथल तथा अन्य कहानियाँ : ' बच्चे ' - पृ.६७

७२. वही - वही - पृ.६८

७३. वही - वही - पृ.७९

७४. सतीश जमाली - बच्चे तथा अन्य कहानियाँ : 'बच्चे' - पृ.१६

७५. मोहन राकेश - नये बादल : 'मलबे का मालिक' - पृ.४५

७६) रघुवीर सिंन्हा, शकुन्तला सिंन्हा	- आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य मुल्यों में प्रयाण	- पृ. ६३
७७) सम्पादक	- डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल कथा भारती : 'शरणदाता'	- पृ. १०२
७८) सम्पादक	- डॉ० रामदरश मिश्र, डॉ० नरेन्द्र मोहन हिन्दी कहानी दो दशक की यात्रा	- पृ. २१०
७९) अज्ञेय	- बदला	- पृ.
८०) मिथिलेश्वर	- बीजारोपण	- पृ. ५६
८१) वही	- वही	- पृ. ५९
८२)डॉ० भैरूलाल गर्ग	- आज की हिन्दी कहानी	- पृ. ३६